www.thearyasamaj.org

R.N.I. No. 2321/57

ओ३म्

रजि. सं. MTR नं. 04/2016-18

जनवरी 2017

अंक 12

तपोभूमि

मासिक

"तुम मुझे खून दो, मैं तुम्हें आजादी दूंगा"

नेताजी सुभाष चन्द्र बोस

(23 जनवरी 1891)

www.thearyasamaj.org

श्री विरजानन्द आर्ष गुरुकुल वेदमन्दिर मथुरा में चतुर्वेद पारायण यज्ञ सोत्साह सम्पन्न

प्रतिवर्ष की परम्परा के अनुसार इस वर्ष भी 6 दिसम्बर से लेकर 25 दिसम्बर तक वेदों का पारायण यज्ञ पूर्ण सफलता के साथ सम्पन्न हुआ। यज्ञ में श्रद्धालुओं के आने का सिलसिला अनवरत लगा रहा। आगरा, फिराजोबाद, मैनपुरी, औरैया, इटावा, एटा, बदायूँ, कासगंज, सम्भल, जे.पी.नगर, गाजियाबाद, दिल्ली, गुड़गाँव, पलवल, फरीदाबाद, अलीगढ़, भरतपुर, धौलपुर, अजमेर, चण्डीगढ़, भटिण्डा, भिण्ड, मुरैना, ग्वालियर, हाथरस, नौएडा आदि स्थानों से आकर श्रद्धालुओं ने आहुतियाँ प्रदान की। गुरुकुल के ब्रह्मचारियों ने वेद पाठ किया। इस अवसर पर श्री कृष्णवीर जी शर्मा फरीदाबाद वाले (गाँव सिमरौठी-अलीगढ़) जिन्होंने भव्य यज्ञशाला का निर्माण वेदमन्दिर में चतुर्वेद पारायण यज्ञ की भव्यता को देखते हुए करवाया। इस पावन यज्ञ पर आने वाले विशिष्ट अतिथियों को ठहरने की असुविधा को देखते हुए एक भव्य अतिथि भवन बनाने का संकल्प लिया है। 6 दिसम्बर से यज्ञ प्रारम्भ कर अतिथिशाला के भवन का 7 दिसम्बर को ही शिलान्यास कर दिया। जिसका निर्माण इतनी शीघ्रता से प्रिय भानु मलिक की देखरेख में हुआ कि 25 दिसम्बर को प्रथम तल की छत्त भी डाल दी गयी। आशा है शीघ्र ही भव्य भवन बनकर तैयार हो जायेगा।

इस यज्ञ में आहुतियाँ देने के लिए विभिन्न अवसरों पर लोग आते रहे। औरैया से प्रेमसिंह आर्य के नेतृत्व में नवयुवकों ने यज्ञ में आहुतियाँ दीं। सिरसागंज से श्री ओमशरण जी आर्य के जन्मदिवस 14 दिसम्बर को सभी आर्य आये। आगरा से श्री राजबहादुर गुप्त, श्री प्रमोद गुप्त, श्री अशोक जी ककुआ वालों के नेतृत्व में यजमानों ने यज्ञ में आहुतियाँ प्रदान की। सम्भल से श्री दयाशंकर जी के नेतृत्व में, मुरादाबाद से श्री ज्ञानेन्द्र गाँधीजी के नेतृत्व में, फरीदाबाद से आर्यजन श्री सुरेश शास्त्री के नेतृत्व में, हाथरस से श्रीमती बीना आर्या के नेतृत्व में और हरदुआगंज-अलीगढ़ वाले श्रद्धालुजन भारी संख्या में उपस्थित हुए। वे इस यज्ञ में आहुति देने के साथ गुरुकुल वृन्दावन के लिए 25 मन चावल, 4 मन गेहूँ, 2 मन दाल भी लेकर आये। बुलन्दशहर से ललित अग्रवाल, विवेक जी, श्री मवासीसिंह आर्य अपनी पूरी कार्यकारिणी के साथ विशेष श्रद्धा से पधारे। कन्नौज से श्री अवधेश गुप्ता आर्यों के साथ सपरिवार पधारे पुत्र और पुत्रवधू जो गृहस्थ जीवन में प्रविष्ट हुए उन्हें भी आहुति दिलाकर आशीर्वाद दिलवाया। दिल्ली से अनीता गुप्ता और उनके पतिदेव ने आकर अपनी नई पुत्रवधू रुचि और पुत्र सिद्धार्थ को यज्ञ में आहुति दिलाकर आशीर्वाद दिलवाया। इसी प्रकार मथुरा निवासी श्री अरुण मित्तल ने भी अपने नव दाम्पत्य जीवन में प्रविष्ट हुए पुत्र और पुत्रवधू को लेकर सपरिवार यज्ञ में आहुति देकर आशीर्वाद लिया। इसी प्रकार 18 दिसम्बर को फरीदाबाद के आर्यजन श्री सुरेश जी शास्त्री के नेतृत्व में यज्ञ में आहुतियाँ देकर

www.thearyasamaj.org

तपोभूमि

ओ३म् वयं जयेम (ऋक्0)

शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक कल्याण की साधिका
(आर्य जगत में सर्वाधिक लोकप्रिय मासिक)

वर्ष–62 संवत्सर 2073 जनवरी 2017 अंक 12

संस्थापक
स्व0 आचार्य प्रेमभिक्षु

संपादक:
आचार्य स्वदेश
मोबा. 9456811519

जनवरी 2017

सृष्टि संवत्
1960853117

दयानन्दाब्द: 193

प्रकाशक
सत्य प्रकाशन
आचार्य प्रेमभिक्षु मार्ग
मसानी चौराहा, मथुरा
(उ0 प्र0)
पिन कोड–281003

दूरभाष:
0565–2406431
मोबा. 9759804182

अनुक्रमणिका

लेख–कविता		पृष्ठ संख्या
वेदवाणी	–डॉ0 रामनाथ वेदालंकार	4
माता शेरां वाली और भगवती जागरण	–स्वामी अखण्डमण्डनानन्द	5–6
स्वास्थ्य	–श्यामसुन्दर दास	7–10
पारस्परिक सहायता	–बाबू दयाचन्द्र गोयलीय	11–12
सुख का अनुभव और उसकी प्राप्ति	–दयाचन्द्र गोयलीय	13–14
सन्तान उत्पत्ति के अनन्तर	–डॉ0 गोकुलचन्द नारंग	15–17
हम फौलादी लाल देश के	–बलवीरसिंह 'करुण'	17
झाँसी की रानी	–सुभद्राकुमारी चौहान	18–22
पति–पत्नी का झगड़ा	–हरिनन्दन पाण्डेय	23–24
निराशग्रस्त–निर्जीव और गृहस्थ जीवन		25
आत्म–समर्पण द्वारा प्रभु भक्ति		26
अपने चेतन स्वरूप को मत भूलो!	–स्वामी श्रद्धानन्द सरस्वती	27–28
मृत्यु स्वीकारने की सिद्धता	–श्रीपाद दामोदर सातवलेकर	29–30
ऋषि दयानन्द का जीवन चरित्र	–पुरुषोत्तमदास	31–34

❀❀❀

वार्षिक शुल्क 150/– पन्द्रह वर्ष के लिये शुल्क 1500/– रूपये

www.thearyasamaj.org

वेदवाणी

लेखकः डॉ० रामनाथ वेदालंकार

वरुण का राज्य दूरव्यापी है

उत यो द्यामतिसर्पात्परस्तान्न स मुच्यतै वरुणस्य राज्ञः।
दिव स्पशः प्र चरन्तीदमस्य सहस्राक्षा अति पश्यन्ति भूमिम्॥ अथर्व0 4.17.6

शब्दार्थः–

(उत) और, (यः) जो (परस्तात्) बहुत परे (द्याम् अतिसर्पात्) द्युलोक के भी परले पार पहुँच जाए, तो भी (सः) वह (वरुणस्य राज्ञः) वरुण राजा के पाश से (न मुच्यातै) नहीं छूट सकता। (अस्य) इस वरुण के (दिवः स्पशः) देदीप्यमान गुप्तचर (इदम्) इस ब्रह्माण्ड में (प्र चरन्ति) प्रचरते रहते हैं, वे (सहस्राक्षाः) सहस्र आँखों वाले होकर (भूमिम् अति पश्यन्ति) भूमि को अतिक्रान्त करके भी देख लेते हैं।

भावार्थः–

वरुण वे सर्वदर्शी सर्वव्यापी जगदीश्वर हैं, जिनकी ज्योति आत्मा में पड़ते ही वह विलक्षण अध्यात्म प्रकाश से जाज्वल्यमान हो उठता है। सब जनों से वरणीय होने के कारण वे वरुण कहलाते हैं। वरुण को हृदय में धारण करके भक्त एक ऐसे दिव्य सखा को पा लेता है, जिसका सखित्व उसके लिए वरदान हो जाता है। वरुण की सरसता उसके लिए शक्ति का स्रोत हो जाती है, रस का सरोवर हो जाती है, जिसमें स्नान करके वह परम प्रफुल्ल और आनन्दमय हो जाता है।

वरुण का साम्राज्य इतना विशाल है कि उसे कोई माप नहीं सकता। बड़े–से–बड़ा फीता उसके लिए छोटा पड़ जाता है। यदि कोई भूलोक से अन्तरिक्षलोक में, अन्तरिक्षलोक से द्युलोक में जाकर फिर द्युलोक के भी पार पहुँच जाए, तो भी वह वरुण के राज्य से बाहर नहीं पहुँच सकता। वरुण राजा के पाश सर्वत्र फैले हुए हैं, जो पापी और अपराधी को तुरन्त बाँध लेते हैं, ईश्वरीय दण्ड पाये बिना वह उनसे नहीं छूट सकता।

वरुण जगदीश्वर का आलंकारिक वर्णन करते हुए मन्त्र के उत्तरार्ध में यह कहा गया है कि इस देदीप्यमान वरुण राजा के गुप्तचर सर्वत्र विचर रहे हैं, उनकी आँखों से वरुण प्रत्येक घटना को, चाहे वह कहीं भी घटित हो रही है, देख लेता है, जान लेता है। चाहे कोई भूलोक को भी अतिक्रान्त कर जाये और वहाँ जाकर किसी की हत्या कर दे, तो वरुण के सिपाही उसे वहाँ भी पकड़ लेंगे और वरुण के दरबार में प्रस्तुत करके उसे यथायोग्य दण्ड दिलवायेंगे। वस्तुतः वरुण जगदीश्वर को गुप्तचरों और सिपाहियों की आवश्यकता नहीं पड़ती, क्योंकि वह स्वयं सर्वकार्यसमर्थ है, तो भी वेद समझाने के लिए सांसारिक लोगों के लिए जैसी भाषा बोली जाती है, वैसी भाषा बोल रहा है। यह काव्यशास्त्र के अनुसार आलंकारिक भाषा है। ❁❁❁

www.thearyasamaj.org

गतांक से आगे–

माता शेरां वाली और भगवती जागरण

न सोना न सोने देना

लेखकः स्वामी अखण्डमण्डनानन्द

यदि देवी जी ने पाण्डवों शाप दिया था तो उसने मुहम्मद बिन कासिम, महमूद गजनवी, औरंगजेब, अहमदशाह अब्दाली तथा नादिरशाह जैसे निर्दयी, आततायी एवं अत्याचारी लोगों को शाप क्यों नहीं दिया? देवी जी ने मन्दिरों में रखी हुई मूर्तियों और उनके पुजारियों की रक्षा क्यों न की? यदि अकबर के समय में गगन पथ से आवाज आई थी तो उससे पूर्व और उसके पश्चात् कभी क्यों नही आई? कौरवों और पांडवों के जुआ खेलने और द्रोपदी के चीरहरण के समय तो श्री कृष्ण जी वहां थे ही नहीं। यदि वह उस समय विराजमान होते तो यह दोनों दुर्घटनायें न होतीं। यदि द्रोपदी की रक्षार्थ अरबों–खरबों की संख्या में साड़ियों का ढ़ेर लग गया था तो पाकिस्तान बनने पर और तत्पश्चात् बंगला देश में वैसा ढेर क्यों नहीं लगा? यदि पांडवों के यज्ञन सम्पूर्ण के समय मां ने पाण्डवों को दर्शन देकर उनके कष्टों को दूर किया था तो अब अपने भक्तों को दर्शन क्यों नहीं देतीं? उनके दु:ख निवारणार्थ उनकी सहायता क्यों नहीं करतीं?

यदि तारा के पिता राजा स्पर्श को ज्योतिषियों ने अपनी पोथीपत्री खोलकर उसकी दूसरी कन्या के सम्बन्ध में फलित ज्योतिष के आधार पर ठीक–ठीक बातें बतलाई थीं जिसके कारण राजा ने उस कन्या को लकड़ी के सन्दूक में रखकर नदी में बहा दिया था तो भगवान रामचन्द्र जी के समय में वैसे ज्योतिषी कहां गए हुए थे जबकि अयोध्या में महाराज के राज्यअभिषेक की तैयारियां हो रही थीं? उस समय सब नर–नारी आनन्द विभोर हो रहे थे जब अनायास उन्हें यह दु:खद समाचार मिला कि भगवान राम, भगवती सीता तथा श्री लक्ष्मण जी चौदह वर्षों के लिये वन जा रहे हैं तो वे फूट–फूटकर रोने लग पड़े और उनकी प्रसन्नता अप्रसन्नता में और आनन्द विलाप में परिवर्तित हो गया।

यदि रुकमणि के दिये हुए दो पैसों की अरदास पर देवी जी ने उसे हंसता खेलता हुआ बालक प्रदान किया था तो अब उसके भक्तों को जागरण पर लाखों रुपये नष्ट करने की क्या आवश्यकता है? जिनके यहां सन्तान नहीं होती वे वैद्यों, हकीमों और डाक्टरों के पास चिकित्सा के लिये क्यों जाते हैं? उन्हें तो चाहिये कि वे देवी जी को दो–दो पैसे भेंट कर दिया करें ताकि उनकी गोद हरी हो जाय। जो लोग निर्धन हैं उन्हें तो ऐसा अवश्य करना चाहिये ताकि उनके घरों में धन की वर्षा हो जाय। यदि जागरण न कराने पर देवी ने रुकमणी के बच्चे को सख्त बीमार कर दिया था तो अब जागरण कराने वालों के बच्चे क्यों बीमार होते हैं और उनमें से कई मर क्यों जाते हैं?

www.thearyasamaj.org

यह माना कि भगतों ने महाकाली जी को मांस मदिरा आदि का भोग लगाया होगा जैसा कि आजकल देवी जी के भक्त करते रहते हैं जिसका प्रत्यक्ष प्रमाण यह है कि चीन सरकार ने नेपाल सरकार को बीस हजार भेड़-बकरियों दीं जिनकी विजय दशमी के अवसर पर काली देवी को बलि दी गई। यह बात भी समझ में आ सकती है कि तारा ने प्रसाद के रूप में मांस-मदिरा लिया होगा, उसमें से कुछ खाकर और बाकी बचाकर वह बाहर चली गई होगी। किन्तु यह बात तो कोई अन्धविश्वासी बुद्धिहीन और मूर्ख व्यक्ति ही मान सकता है कि मांस मदिरा आदि (जिसे राजा ने अपनी आंखों से देख लिया था) पान, सुपारी तथा नारियल में परिवर्तित हो गये थे। यदि उस समय देवी जी ने चमत्कार दिखलाया था तो अब क्यों नहीं दिखलाती ताकि सब लोग उनके उपासक बन जाएं? अपनी पागल पत्नी के कहने पर कोई पागल पति ही अपने इकलौते बेटे की हत्या करके और उसका मांस पकाकर खा सकता है, किन्तु राजा हरिश्चन्द्र जैसा बुद्धिमान व्यक्ति स्वप्न में भी ऐसा जघन्य कार्य कदापि नहीं कर सकता। यदि देवी जी अपनी शक्ति से आग जलाकर राजा हरिश्चन्द्र के हाथों से कटे हुए घोड़े और पुत्र का मांस पका सकती हैं तो आजकल ऐसा क्यों नहीं होता? यदि देवी जी को याद करने से कटे और खाये गये घोड़े और मनुष्य पुनः जीवित हो सकते हैं तो अब ऐसा क्यों नहीं होता? **-(शेष अगले अंक में)**

तपोभूमि मासिक के पाठकों से विनम्र निवेदन

'तपोभूमि' मासिक पत्रिका प्रतिमाह आप तक पहुँच रही है। हमारा हर सम्भव प्रयास यही रहता है कि पत्रिका में उच्चकोटि के विद्वानों के सारगर्भित लेख प्रकाशित करके आर्यसमाज और महर्षि दयानन्द सरस्वती जी के सिद्धान्तों के अनुसार प्रचार करते हुये यह पत्रिका जन-जन तक पहुँचे। ताकि वे इसका पूर्णतया लाभ प्राप्त कर सकें। लेकिन यह तभी सम्भव है जब आप सबका सहयोग हमें मिले।

'तपोभूमि' मासिक के पाठकों से निवेदन है कि जिन्होंने अपना वार्षिक शुल्क चालू वर्ष या पिछले वर्ष का शुल्क अभी तक नहीं भेजा है। वे शीघ्रातिशीघ्र शुल्क भिजवाने की व्यवस्था करें। वार्षिक शुल्क 150/- एक सौ पचास रूपये तथा पन्द्रह वर्ष हेतु 1500/- एक हजार पाँच सौ रूपये भेजकर पत्रिका का लाभ उठायें।

हम आपको वार्षिक विशेषांक सहित पत्रिका पहुँचाते रहेंगे। आपके सहयोग व हमारे परिश्रम से निरन्तरता बनी रहेगी और महर्षि दयानन्द सरस्वती जी व आर्यसमाज का प्रचार-प्रसार भी होता रहेगा।

हमें अपने ग्राहक महानुभावों से यही अपेक्षा है कि बिना विघ्न कार्य सुचारू रूप से चलता रहे। साथ ही यह भी प्रार्थना है कि आप अपने परिश्रम से नवीन ग्राहक बनवाने का सौभाग्य प्राप्त करें।

-धनराशि भेजने हेतु बैंक का नाम व पता एवं खाता संख्या-

इण्डियन ओवरसीज बैंक
शाखा युग निर्माण योजना, गायत्री तपोभूमि, जयसिंहपुरा, मथुरा
I F SC Code- I OB A 0001441 ***'सत्य प्रकाशन'*** *खाता संख्या- 144101000002341*

सत्साहित्य का प्रचार-प्रसार राष्ट्र की सर्वोत्तम सेवा है।

www.thearyasamaj.org

गतांक से आगे–

स्वास्थ्य

लेखकः– श्यामसुन्दर दास

व्यायाम

व्यायाम प्रत्येक मनुष्य के लिये परमावश्यक है। योगी लोग योग की क्रियाओं द्वारा इसका भी साधन करते थे। अच्छी पाचन-शक्ति शरीर को स्थिर, बलवान एवं रोगमुक्त रखने के लिये भोजन से भी अधिक आवश्यक है। बिना व्यायाम के पाचन-शक्ति ठीक रहती ही नहीं। इसीलिये व्यायाम शरीर यात्रा के लिये न केवल आवश्यक, वरन् अनिवार्य है। व्यायाम के लिये ताजी हवा भी गुणद है। प्राचीन काल से अद्यावधि अनेक प्रकार के व्यायाम संसार में प्रचलित हुए हैं और हैं। चलना, दौड़ना, कूद-फाँद, मछली पकड़ना, तैरना, घोड़े पर चढ़ना, डंड, मुदगर, बैठक, गोल्फ, नाव चलाना, डंबल, टेनिस, क्रिकेट, पोलो, फुटबाल आदि अनेकानेक प्रकार के व्यायाम हैं। व्यायाम के लिये उसका सदैव स्थिर समय पर होना आवश्यक है। **"अहरे कहरे डंडे करैं, दैव न मारै आपुइ मरैं।"** अर्थात् व्यायाम में नियम भंग करना एक प्रकार का आत्मघात है। फिर भी देखा गया है कि नित्य व्यायाम करनेवाले बहुत कम हैं और नैमित्तिक अधिक। कहते हैं कि जीवन भर में किसी न किसी समय प्रत्येक मनुष्य को अपनी देह बनाने का शौक अवश्य होता है, किन्तु जिनका चित्त समुद्र तरंगों की भाँति चंचल होता है, उन्हें इस उत्साह से कोई विशेष लाभ नहीं होता। मनुष्य जीवन के लिये मानसिक दृढ़ता एक बड़ा ही आवश्यक गुण है। जिसके विचार अदृढ़ और डांबाडोल होते हैं, उसका सारा जीवन वैसा ही निंद्य और लक्ष्यहीन रहता है। देह शुद्धीकरण की इच्छा को पत्थर की भांति दृढ़ रखना चाहिए और नित्य बिना विघ्न उसका साधन उचित समय के लिये अवश्य होना उचित है। खाना, सोना आदि जैसे आवश्यक हैं वैसे व्यायाम भी है। जो लोग इसका दृढ़तापूर्वक साधन करते हैं वे आकस्मिक घटनाओं के अभाव में शतंजीवी हो कर तथा नीरोग रहकर पूर्ण सांसारिक सुख का भोग करते हैं।

व्यायाम कैसा होना चाहिए इसके विषय में विशेष मतभेद नहीं है किन्तु आचरण भेद बहुत है। सबसे अच्छा व्यायाम वह समझा जायगा जिससे शुद्ध वायु प्रचुरता से मिले, शरीर सबल हो और कौतूहल भी खूब प्राप्त हो। मनुष्य जीवन के लिये वैविध्य एक आवश्यक पदार्थ है। और आनिर्वृत्य (एकंगीपन) इसको बड़ी हानि पहुँचाता है। इसलिये व्यायाम में भी विविध प्रकार के कौतूहलों की ओर रुचि रखना जीवन पूर्णता का सहायक है। मनुष्य को सभी अच्छी बातों की ओर थोड़ी बहुत रुचि रखनी चाहिये। जो लोग एक ही लीक पर अनुगमन करते हैं उनका जीवन शुष्क, नीरस, एवं तिरस्कारणीय हो जाता है।

www.thearyasamaj.org

देशी कसरतों में बैठक और मुद्गर कुछ अच्छे हैं। डंड में रुधिर प्रवाह का ठेला शिर की ओर विशेषता से होता है। जिससे बुद्धिह्रास का खटका रहता है और मस्तिष्क साफ नहीं रहता। कहा गया है कि साधारणतया चलना श्रेष्ठतम व्यायाम है। साधारणतया स्वस्थ पुरुष को तीन घंटे नित्यप्रति मैदान में रहना चाहिए। प्रति घंटा तीन मील से कम चलना पूरा लाभ नहीं पहुँचाता। इस प्रकार प्रति दिन नौ मील चलने के बराबर व्यायाम प्रत्येक स्वस्थ पुरुष को करना उचित है। तैरना चलने के बराबर ही लाभकारी है। वरन् उससे भी कुछ श्रेष्ठतर हो सकता है, किन्तु सधारण मनुष्यों के लिए अधिकता से यह अवसर, सरोवर आदि के अभाव से उपलब्ध नहीं है। घोड़े की सवारी भी अच्छा लाभ पहुँचाती है। मीलों के हिसाब से इसमें प्रायः उतना ही चलने से आधा व्यायाम होता है। नाव चलाने में भी अच्छा मनोरंजन और व्यायाम होता है। भोजन करने के कुछ ही पीछे स्नान न करना चाहिए। इसीलिये हमारे यहाँ स्नान के पीछे भोजन की विधि है। यदि किसी दिन समयाभाव से चलने के लिये पूरा अवकाश न मिले, तो दौड़कर अपना व्यायाम पूरा कर लेना चाहिए। प्रायः प्रातःकाल चलने, दौड़ने आदि के लिये रखना चाहिए और सायंकाल टेनिस, क्रिकेट, फुटबाल आदि के लिये।

रहाइस

साधारण रहाइस के विषय में भी मनुष्य को पूरा ध्यान देना चाहिए। कहा गया है कि रात को जल्दी सोना और प्रातःकाल जल्दी उठना मनुष्य को स्वस्थ, धनी, और बुद्धिमान बनाता है। यह कथन केवल डींग नहीं है। वरन् विचारपूर्वक देखने से बहुत ही ठीक ठहरेगा। उर्दू के किसी कवि ने क्या ही यथार्थ कहा है कि–

"गाफिलो करता है यह सूरज इशारा सुबह को।
अब उठो सामां करो सब अपने अपने काम को।।
खूब मेहनत करके दिन काटो कि रोजी हो नसीब।
शब का सोना वक्त फिर आयेगा वह आराम का।।"

हमारे यहाँ प्रातःकाल का संध्यावंदन नक्षत्र सहित काल में सर्वश्रेष्ठ कहा गया है। साधारण आह्विक सूर्योदय प्रायः डेढ़ घंटे में होता है। पहले पूर्व दिशा में कुछ कालिमा होती है जो क्रमशः बढ़कर पश्चिम की क्षितिज रेखा पर्यन्त व्योम मंडल में छा जाती है। फिर पूर्व दिशा से ऊषा की लालिमा का उदय होता है जो धीरे-धीरे बढ़ती हुई कालिमा की भाँति पश्चिम तक छा जाती है। इसके पीछे सूर्य की लालिमा निकलती है और तब सूर्योदय होता है। इन सब बातों में उत्तरीय भारत में पूरा डेढ़ घंटा लगता है। यही डेढ़ घंटा प्रातःकालिक व्यायाम के लिये सर्वोत्कृष्ट है। दरवाजे के वृक्षों की फुनगियों को जिस समय सूर्य-रश्मि आलिंगन करे वही वही समय मनुष्य के लिये व्यायाम से निवृत्त होकर घर पहुँचने का है।

स्वास्थ्य-प्राप्ति के लिये नशा, हुक्का आदि दुर्व्यसनों से प्रत्येक सुधी पुरुष को बचा रहना चाहिए। यह भी ध्यान रहे कि अतिचार सेवन कभी न होने पावे, अर्थात् यह कभी न हो कि घोर शीत से प्रचंड

www.thearyasamaj.org

उष्णता में आ जावे या ऐसी ही और बातें कर बैठे। स्वास्थ्य के लिये मनुष्य को साधारण स्वस्थ जीवन निर्वाह करना चाहिए, यह नहीं कि स्त्री-व्यसनादि बहुत अधिक बढ़ जावें अथवा बिलकुल इन बातों का व्यवहार ही न हो। जिन इन्द्रियों को प्रकृति ने जिन कामों के लिये प्रदान किया है उनसे वही काम लेना चाहिए, उनसे विपरीत अथवा इतर नहीं। लड़कों के लिये आज्ञा है कि दिन रात के 24 घंटों में 8 घंटे सोओ, 8 घंटे पढ़ो, और 8 घंटों तक खाओ खेलो। युवा पुरुषों के लिये सात घंटा सोना अलम् है। जाड़े में आध घंटा अधिक सोना लाभकर है। भारी चिंता और दीर्घसूत्रता से सदैव शांतकर और लाभदायक होता है। इससे बहुत अंशों में मानसिक व्यग्रता का तिरोभाव हो जाता है।

ब्रह्मचर्य के सिद्धान्तों पर ध्यान रखना साधारण रहाइस के लिये परम उपयोगी है। हमारे भारत में अपत्योत्पादिनी शक्ति थोड़ी ही अवस्था में प्राप्त हो जाती है, किन्तु उसके व्यवहार में शीघ्रता न करनी चाहिए। 17 से 23 वर्ष की अवस्था में मनुष्य का शरीर जितना बढ़ता है उतना और किसी अवस्था में नहीं बढ़ता। यही अवस्था जीवनगृह की नींव है, जिसके दृढ़ न होने से सारा भवन डगमगाने लगता है और थोड़े ही कारण से भरभरा कर ढेर हो जाता है। कहा भी है कि–

जीवन गृह की बालवैस है नींव विशाला।
कौन भौन बिनु सुदृढ़ नींव नहिं डगमग हाला।।

उपरोक्त अवस्था में शरीर की इतनी वृद्धि होती है कि जितना बल वीर्य संचित होता है उसी की वृद्धि में लग जाता है। यदि इस वय में वीर्य का कुछ भी अपव्यय होता है तो शरीर सदा के लिये सरुज और बलहीन हो जाता है। तुलसीदास जी ने क्या ही यथार्थ कहा है कि "सरुज शरीर बादि सब भोगा"। ब्रह्मचर्य के विषय में हम अपने निम्न दो छंद यहाँ लिख देना उचित समझते हैं–

ऋषियों ने व्रत ब्रह्मचर्य को नित सनमाना।
सकल व्रतों का सदा इसे सिरताज बखाना।।
चढ़ती है जो जोति बदन पर इस व्रत वर से।
मिलती है जो शक्ति भुजों को इस जलधर से।।

वह नहीं अन्य विधि से कहीं किसी भाँति से नर पा सके।
बरु खाय हजारों औषधैं सब मंत्रों की दिसि तकै।।

यह व्रत वर पच्चीस बरस तक जो नर पालै।
सिंह सरिस सो गजै सदा रोगों को घालै।।
लखौं जियौं सुनौं चलौं शत बरस अदीना।
विदित प्रार्थना है जु वेद में यह कालीना।।
वह जग में ऐसे पुरुष को पूरण होती है सदा।
जो पहले कर व्रत पूर्ण बरता है पत्नी सदा।।

www.thearyasamaj.org

उपरोक्त विचारों के अनुसार बालविवाह और बहुविवाह अत्यन्त गर्हित हैं। जब वैवाहिक स्त्रीसंसर्ग विषय में ऐसे कड़े नियम हैं, तब व्यभिचार तो सभी दशाओं में महानिंद्य हैं। प्रत्येक व्यभिचारी पुरुष आत्मघात का दोषी है और प्रति व्यभिचार एक प्रकार का आत्मघात है, जैसाकि ऊपरवाले अध्याय में कहा जा चुका है। प्रत्येक मनुष्य का शरीर उसके पास थाती स्वरूप है। किसी को ईश्वरीय थाती के साथ मनमानी करने का अधिकार नहीं है। अतः स्वास्थ्य संबंधी नियमों को पालन करना एक बड़ा धर्म है, यथा– **"शरीरमाद्यं खलु धर्मसाधनम्।"**

स्वास्थ्य पर मानसिक विचारों का भी बहुत बड़ प्रभाव पड़ता है। जो मनुष्य अपने को बूढ़ा समझने लगता है वह थोड़े ही दिनों में वास्तव में बूढ़ा हो जाता है। यह कथनमानस शास्त्र के निगूढ़ सिद्धान्तों पर अवलंबित है। इसका प्रदर्शन हम यहाँ एक उदाहरण द्वारा करते हैं। यदि पृथ्वी पर एक हाथ चौड़ा और पाँच सौ हाथ लम्बा रास्ता बनाया जाय और किसी से कहा जाय कि इस पर इस प्रकार चलो कि बाहर पैर न पड़ने पावे, तो वह न केवल उस पर सुगमतापूर्वक चला जायगा वरन् दौड़ भी सकेगा। किन्तु यदि ऐसा ही रास्ता पचास गज ऊँची दीवार पर बनाया जाय, तो साधारण मनुष्य उस पर चलने में गिर अवश्य पड़ेगा। अब देखना चाहिए कि रास्ता तो एक ही है, अर्थात् दोनों दशाओं में बराबर चौड़ाई तथा समथल है किन्तु फिर भी चलनेवाले पर ऐसा प्रभाव क्यों पड़ता है? इसका कारण भय से बहुत बड़ा सम्बन्ध रखता है, अर्थात् मानसिक है। ऊँचे मार्ग पर चलने में मनुष्य को गिरने का भय आ घेरता है। ऐसी दशा में वह दिमाग में अपनी गिरती हुई प्रतिमा देखने लगता है। देह का यह नियम है कि वह मस्तिष्क के कर्मों की नकल करता है। इसीलिये भयवश गिरती हुई मानसिक प्रतिमा देखने के कारण शरीर न चाहते हुए भी उसकी नकल करके गिर पड़ता है। इसी भाँति जो मनुष्य अपने को बूढ़ा समझता है, वह दिमाग में अपनी बूढ़ी प्रतिमा देखकर थोड़े ही समय में सचमुच बूढ़ा हो जाता है। इसका एक यह भी कारण है कि अपने को बूंढ़ा समझ कर वह युवा लोगों के योग्य कामों में योग नहीं देता; जिससे थोड़े ही दिनों में शरीर बलहीन होकर उसे सचमुच बूढ़ा बना देता है। इसी से दर्शन शास्त्रज्ञों ने कहा है कि बढ़ती हुई अवस्था में भी मनुष्य को बालकोचित कर्मों और खेल कूदों में सम्मिलित होना चाहिए। जो लोग ऐसा करते हैं वे साधारण लोगों की अपेक्षा कुछ अधिक दिनों में बूढ़े होते हैं। ❁❁❁

सत्य प्रकाशन के पुनः प्रकाशित उपलब्ध प्रकाशन

शुद्ध रामायण सजिल्द	मूल्य 220)	भारतीय संस्कृति के तीन प्रतीक	मूल्य 20)
शुद्ध रामायण अजिल्द	मूल्य 170)	दयानन्द और विवेकानन्द	मूल्य 15)
शुद्ध हनुमच्चरित	मूल्य 60)	बाल मनुस्मृति	मूल्य 12)
वैदिक स्वर्ग की झांकियाँ	मूल्य 40)	इतिहास के स्वर्णिम पृष्ठ	मूल्य 12)
यज्ञमय जीवन	मूल्य 30)	ओंकार उपासना	मूल्य 12)
मील का पत्थर	मूल्य 20)	दादी पोती की बातें	मूल्य 10)
भ्रांति दर्शन	मूल्य 20)		
चार मित्रों की बातें	मूल्य 20)		

www.thearyasamaj.org

गतांक से आगे–

पारस्परिक सहायता

लेखकः बाबू सूरजभान वकील

पहले इस पारस्परिक सहायता की एक और उत्तम प्रथा प्रचलित थी जिसका किंचित आभास इस समय भी गाँववालों में पाया जाता है। वह यह कि जो आदमी अपने गाँव में आता था या राह चलता हुआ मुसाफिर ठहर जाता है, वह चाहे पहिचान का हो या गैर पहिचान का, जाति का हो, या गैर जाति का, दूर का हो या नजदीक का, गरज यह कि कोई भी हो उसे मकान, चारपाई, खाना आदि सब कुछ दिया जाता था और उसकी सब प्रकार से सेवा की जाती थी–उसे सब तरह से आराम पहुँचाया जाता था। इस प्रकार की सेवा भी यद्यपि निष्काम सेवा थी, परन्तु इसका बदला उनको अवश्य मिल जाता था। क्योंकि जब वे बाहर जाते थे तब उनको भी इसी प्रकार का आराम मिलता था और उन्हें किसी तरह की दिक्कत नहीं उठानी पड़ती थी। हाँ, यह अवश्य होता था कि ये तो किसी अन्य गाँव में जाते थे और इनके यहाँ अन्य गाँव के लोग आते थे, अर्थात् सेवा तो इनको किसी गाँव वालों की करनी पड़ती थी और अपनी सेवा किसी दूसरे गाँववालों से करानी पड़ती थी। परन्तु इस उदार व्यवहार से सफर करने में सभी को आराम मिलता था और यही उनकी सेवा का बदला था। परन्तु अत्यन्त खेद की बात है कि अब भारतीय मनुष्यों के हृदय से उनकी कमजोरी और अज्ञानता के कारण मनुष्य मात्र की सेवा का उदार भाव निकल गया है और अब वे सभी बातों में तुरन्त बदला पाने की आशा करने लगे हैं। इससे मुसाफिरों को आराम मिलने का उक्त सहज मार्ग बन्द हो गया है। इसी प्रकार और भी कई तरह की सहायताओं के तरीके भी बिगड़ गये हैं कि जिनके कारण कई तरह की अड़चनें और तकलीफें बढ़ गई हैं।

मनुष्यों को ऐसी बहुत सी चीजों की जरूरत पड़ती है जो एक एक दो दो ही सारे गाँव के लिए काफी हो सकती हैं, परन्तु जिनको गाँव का प्रत्येक मनुष्य अपने लिये अलग अलग नहीं रख सकता है। इसलिए उनमें से किसी को तो गाँव के सब लोग साझी होकर बनवा लिया करते थे और किसी किसी को एक एक आदमी ही बनवा लेता था। इस प्रकार सभी चीजें बन जाती थीं और सबके काम आती थीं। जैसे कोई तो गाँववालों के बैठने और मुसाफिरों के ठहरने के लिए मकान बनवा देता था, कोई कुंआ खुदवा देता था, कोई देवमन्दिर बनवा देता था, कोई गऊओं के गाभिन हो के लिए साँड़ छोड़ देता था, कोई भैंसों के लिए भैंसा दे देता था, कोई ढोरों को पानी पिलाने के लिए कच्चे पक्के तालाब बनवाता था, कोई दवा बाँटता था, कोई पाठशाला खुलवाता था, कोई ढोरों के चरने के लिए गोचरभूमि छोड़ देता था, कोई बड़े बड़े शामियाने फर्श और टोकने कढ़ाई आदि बनवाता था कि जिनकी विवाह बरातों अथवा ज्योनारों में जरूरत पड़ती है और कोई श्मशान के लिए जमीन दे देता था। गरीब लोग अपने गाँव की रक्षा करते थे और बीमारी आदि जरूरतों के समय रोगियों की सेवा–सुशुश्रा के काम आते थे। इस प्रकार यद्यपि सभी

www.thearyasamaj.org

लोग सबकी सहायता करते थे परन्तु वे अपने दिल में कभी बदले का ख्याल नहीं लाते थे और गाँव की सेवा करना अपना परम कर्तव्य समझते थे।

इन सार्वजनिक हित की चीजों को फिर से किसी की बनवाई क्यों न हों-उपयोग में लाने का अधिकार सब लोगों को होता था और इसमें किसी पर किसी का अहसान नहीं समझा जाता था। सब गाँववालों का परस्पर ऐसा व्यवहार होता था जैसा कि एक घर में इकटठे रहनेवाले चार आदमियों का होता है। उनमें अपनी अपनी योग्यता के अनुसार कोई कुछ काम करता है और कोई कुछ, और इस प्रकार उनके ये सब कार्य मिलकर ही घर का प्रबन्ध बँध जाता है और सबको आराम पहुंचने लगता है। इन घरवालों में यह विचार तो अवश्य होता है कि सबने अपनी अपनी योग्यता के अनुसार पूरा पूरा कार्य किया या नहीं, परन्तु यह खयाल हर्गिज नहीं होता है कि किसका कार्य अधिक मोल का हुआ और किसका कम का। बल्कि जब ऐसा ख्याल आने लगता है तब उनमें फूट पैदा हो जाती है और वे सब लोग अपने अपने स्वार्थों की ओर खिंचकर सम्मिलत प्रबन्ध का ढाँचा तोड़ बैठते हैं। ऐसा होने से सभी भारी दिक्कत में फंस जाते हैं और कोई अपना कार्य पूरा नहीं कर पाता है। इसी प्रकार गाँववालों में भी जब तक यह बात रहती है कि यदि किसी के काम में किसी लखपति ने सौ रुपया लगाया हो, हजारपति ने एक ही रुपया दिया हो, सौ रुपयों की हैसियत वाले ने दो आने का काम बनाया हो, दस पांच रुपये की हैसियत वाले ने एक पैसे का काम किया हो, तो यही समझा जावेगा कि सबने अपनी अपनी योग्यता के अनुसार पूरा पूरा काम कर दिया है और उस वस्तु पर सबका समानाधिकार है, तब तक उस गाँववाले एक कुटुम्ब की नाईं हिल मिलकर रहते और परस्पर की पूरी पूरी सहायता पाते हैं, परन्तु जब उनमें बदले का तौल-जोख होने लगता है तब सब अपनी अपनी तरफ से खिंच जाते हैं और सभी को बड़े बड़े संकटों का सामना करना पड़ता है।

जिस प्रकार कुटुम्ब में छोटे छोटे बच्चों, बीमारों और उन अपाहिंजों की भी पालना की जाती है जिनसे किसी प्रकार के काम की आशा नहीं की जाती है, उसी प्रकार गाँव के कंगालों और अपाहिजों का पालन पोषण करना और उनको किसी प्रकार का दुःख न होने देना भी गाँववालों का धर्म है। ये अपाहिज लोग अन्य धनवानों तथा बलवानों के समान समस्त गाँववालों को प्रिय होते हैं और सब लोग उनकी पूरी पूरी खबर रखते हैं। क्योंकि यदि ऐसा न किया जाय तो मनुष्यजाति बहुत संकट में फंस जाय। कारण कि जो मनुष्य आज लखपति या बलवान बने फिरते हैं, कौन कह सकता है कि कल उनकी क्या दशा होगी। बहुत संभव है कि वे भी कल ऐसे ही कंगाल अथवा अपाहिज हो जायँ। यदि इन अपाहिजों के पालन-पोषण की प्रथा उठा दी जाय तो उनको अथवा उनकी संतानों को भूखा मरना पड़े जो आज धनी और सुखी कहलाते हैं। परन्तु खेद की बात हैकि आज कल इस देश में दीनों और अपाहिजों के पालन की प्रथा प्रायः लुप्त ही हो चली है। ऐसे बहुत से लोग देखे जाते हैं जो गाँव के अपाहिजों की सहायता तो क्या करेंगे अपने बूढ़े माता पिता की पालना भी नहीं करते हैं। ये लोग यह नहीं सोचते हैं कि जब हम बूढ़े होंगे तब हमारी सन्तान भी हमारे साथ ऐसा ही व्यवहार करेगी जैसा कि हम अपने बूढ़े माता पिता के साथ करते हैं। ❀❀

www.thearyasamaj.org

सुख का अनुभव और उसकी प्राप्ति

लेखकः- दयाचन्द्र गोयलीय

सच्चे सुख का वही हृदय अनुभव कर सकता है कि जो प्रेम, पवित्रता, सत्य और उदारता से परिपूर्ण हो। जिसका हृदय इनसे शून्य है उसे सुख का अनुभव नहीं हो सकता, कारण कि सुख का सम्बन्ध मन और हृदय से है। लालची आदमी चाहे करोड़पति हो जाए, किन्तु सदा नीच, पतित और घृणित रहेगा और जब तक दुनिया में उससे अधिक धनवान् मनुष्य रहेंगे वह उन्हें देखकर अपने को निर्धन ही समझेगा; परन्तु इसके विपरीत सच्चा ईमानदार और दयालु मनुष्य चाहे उसके पास धन सम्पदा कुछ भी नहीं हो, तो भी वह सदा सुखी रहेगा। यदि मनुष्य को संतोष नहीं है तो वह निर्धन है परन्तु जिसे संतोष है, वह धनवान् है और जो मनुष्य उदार है, अर्थात् जो कुछ उसके पास है उसे दूसरों के लिये व्यय करता है वह और भी अधिक धनवान् है।

जब हम इस बात पर विचार करते हैं दुनिया में कैसी कैसी उत्तम वस्तुएँ भरी हुई हैं और मनुष्य लोभ के वशीभूत होकर केवल कुछ रुपयों अथवा कुछ एकड़ जमीन को लेने की इच्छा करता है, तब हमें इस बात का भली भांति ज्ञान हो जाता है कि स्वार्थ मूर्खता और अज्ञानता का सूचक है। उसी समय हमें इस बात का भी ज्ञान हो जाता है कि स्वार्थपरता हमारे नाश का कारण है।

देखो, प्रकृति कैसी उदारता के साथ सब कुछ दे डालती है और फिर भी सब कुछ उसके पास रहता है, उसमें कुछ भी कमी नहीं आती। इसके विपरीत मनुष्य जो इतना लालची है कि प्रत्येक वस्तु को लेने की इच्छा करता है, अन्त में सब कुछ खो बैठता है।

अतएव यदि तुम श्रेय अर्थात् सच्चे सुख को प्राप्त करना चाहते हो तो इस विश्वास को अपने मन से निकाल डालो कि हमें भलाई के बदले बुराई मिलेगी। मुझे सच्चाई के सिद्धान्त पर अटल विश्वास है और मैं उस सिद्धान्त के सामने और किसी सिद्धान्त को मानने के लिये तैयार नहीं हूँ। मुझे विश्वास है कि भलाई का परिणाम भलाई है और बुराई का परिणाम बुराई। यह कदापि नहीं हो सकता कि भलाई का परिणाम बुराई हो। ऐसा समझना भ्रम और अज्ञानता है।

प्रत्येक अवस्था में वह काम करो जिसे तुम ठीक समझते हो। ईश्वर पर और उसकी शक्ति पर जो सम्पूर्ण संसार में विद्यमान है, विश्वास करो। वह शक्ति सदैव तुम्हारे साथ रहेगी, तुम्हारी रक्षा करेगी और तुम्हें छोड़कर कहीं नहीं जाएगी। ऐसा सम्यक् श्रद्धान करने से तुम्हारे दुःख और कष्ट सुख के रूप में परिवर्तित हो जाएँगे और जिन बातों का तुम्हें भय है वे सब तुम्हारे लिये शांति और कल्याण का कारण हो जाएँगी। प्रेम, पवित्रता, सत्य और उदारता को कभी न त्यागो, कारण कि ये ही गुण श्रम और साहस के साथ मिलकर तुम्हें कल्याण के मार्ग पर ले जाएँगे। जिन लोगों का यह सिद्धान्त है कि 'आप सुखी,

www.thearyasamaj.org

अर्थात् पहले अपना भला सोचो, पीछे दूसरों का, वे भूल पर हैं। तुम उनकी बातों में न आओ। इसके ये अर्थ हैं कि दूसरों की कोई चिंता में लगे रहो। जो लोग ऐसा करते हैं, उनके लिये एक दिन ऐसा आएगा कि जब सब लोग उन्हें छोड़ देंगे और वे अकेले पड़े हुए दु:ख में चिल्लाएँगे तो कोई भी उनकी नहीं सुनेगा और न कोई उन्हें मदद देगा। दूसरों का कोई विचार न करके केवल अपनी ही चिंता करना मानो प्रत्येक उत्तम और श्रेष्ठ सुख को रोकना और पक्षपात से काम लेना है। अपनी आत्मा को बढ़ाओ और अपने हृदय को दूसरों के प्रति प्रेम और सहानुभूति प्रदर्शित करने के लिये उदार बनाओ। इससे तुम्हें असीम आनन्द होगा और उच्च और स्थाई सुख की प्राप्ति होगी।

जिन लोगों ने नेकी और सच्चाई का रास्ता छोड़ दिया है, उन्हें दूसरों के सामने अपनी रक्षा करने की जरूरत है, परन्तु जो लोग सदा नेकी पर चलते हैं उन्हें इस प्रकार की रक्षा की कोई जरूरत नहीं है। यह केवल कहने की बात नहीं है। आजकल भी ऐसे आदमी मौजूद हैं कि जिन्होंने सत्य और विश्वास के बल पर कभी किसी प्रकार के विरोध की चिंता नहीं की और विरोध के होने पर भी जो अपने मार्ग से कभी विचलित नहीं हुए और उन्नति के शिखर पर पहुँच गए। इसके विपरीत जिन्होंने उनका विरोध किया, उनको हानि पहुँचानी चाही वे स्वयमेव पराजित होकर पीछे हट गए और अवनत दशा में पड़ गये।

जिन अंतरंग गुणों को नेकी और भलाई कहते हैं उनके होने से मनुष्य बुराई की सम्पूर्ण शक्तियों से सुरक्षित रहता है और परीक्षा के समय और भी अधिक दृढ़ हो जाता है। उन गुणों को अपने में उत्पन्न करना मानो अक्षय सुख और सफलता को प्राप्त करता है। ❁❁❁

महापुरुषों की जयन्ती

गुरू गोविन्दसिंह	5 जनवरी
स्वामी विवेकानन्द	12 जनवरी
महादेवभाई देसाई	13 जनवरी
सावित्रीबाई फुले	15 जनवरी
महादेव गोविन्द रानाडे	16 जनवरी
सुभाषचन्द्र बोस	23 जनवरी
माता जीजाबाई	25 जनवरी
लाला लाजपतराय	28 जनवरी
विश्वकर्मा	28 जनवरी

महापुरुषों की पुण्यतिथि

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र	6 जनवरी
सदाशिवराव अमीन	7 जनवरी
लालबहादुर शास्त्री	11 जनवरी
मास्टर दा सूर्यसेन	12 जनवरी
सिपाही बहादुर	13 जनवरी
महादेव गोविन्द रानाडे	16 जनवरी
जे० कृष्णमूर्ति	17 जनवरी
खान अब्दुल गफ्फार	20 जनवरी
वीर हेमू कालानी	21 जनवरी
डॉ० होमी भाभा	24 जनवरी
महात्मा गांधी	30 जनवरी

राष्ट्रीय युवा दिवस	*12 जनवरी*
लोहड़ी–पंजाब	*13 जनवरी*
मकर संक्रान्ति	*14 जनवरी*
गणतंत्र दिवस	*26 जनवरी*

सन्तान उत्पत्ति के अनन्तर

लेखकः डॉ० गोकुलचन्द नारंग

सन्तान उन तमाम नस्लों का नतीजा है, जो उसकी उत्पत्ति के प्रथम, व्यतीत हो चुकी हैं। मानो वह अतीतकाल को वर्तमानकाल से मिलाने का एक जीता जागता घेरा है। उसके रक्त में अतीत काल का सामायिक दृश्य गुप्त रीति से विद्यमान होता है। उत्पत्ति के बाद शिक्षा द्वारा सन्तान की छिपी हुई शक्ति जागृति होती है। बच्चे का असर बहुत दिनों तक उसकी मृत्यु के पश्चात भी अविशेष रहता है। इस कारण यह आवश्यक है, कि उसमें एक ऐसी शक्ति अवश्य कर देनी चाहिये, कि जिसका आदर्श वह अपने बाद अपनी सन्तान में छोड़ जा सके। बच्चों की शिक्षा में लोग सबसे बड़ी यह गलती करते हैं, कि वह बच्चे को वैसा बनाना चाहते है, कि जैसा वह अपनी बुद्धि अनुसार उसके लिये सोच कर निश्चय कर चुके हैं। उनके चित्त में यदि किसी बड़ी नौकरी की लालसा है, तो बच्चे को यदि वह स्वाभाविक व्यायाम को पसन्द करता हो, तो वह दूसरा राममूर्ति नहीं बन सकता, पिता उसकी व्यायाम सम्बन्धी चेष्टा को घृणा की दृष्टि से देखते हैं। और उसे अपने मतानुसार चलाने की चेष्टा करते हैं। इस विषय पर अंग्रेज लोग अपना उचित कर्तव्य पालन किया करते हैं। वह बच्चे को डाक्टरी परीक्षा से वैसा ही बनाते हैं, कि जैसा वह (बच्चा) बनना चाहता है। यदि वह प्रसिद्ध एक्टर होना चाहता है, तो पिता उसे किसी नाटक के मैनेजर को सौंप देगा। सन्तान के मस्तक की बनावट जिस कार्य करने के लिये उपयुक्त हो और उसकी सबसे बड़ी पहिचान यह है, कि बच्चा स्वयं ही वैसा कार्य करने अथवा कहने लगता है। उसको वैसा ही कार्य सौंपना चाहिये। बचपन की अवस्था में बादशाह नौशेरवाँ मुंसिफ बनकर अक्सर खेला करता था। उस समय उसकी मां एक गरीब कृषक की पुत्री और पिता राज्यच्युत बागी की भांति भागा हुआ मनुष्य था। कहते हैं, कि उसने अपने मामाजाद परमप्रिय भाई को मेंढक के मार डालने के अपराध में फांसी की व्यवस्था की थी। यदि उसी समय उसका नाना खेत पर से न आ जाता तो वह अवश्य ही अपने भाई को फांसी दे देता। अभिप्राय यह है, कि उन्हीं खेलों के कारण नौशेरवां जगतप्रसिद्ध मुंसिफ (न्यायी) प्रसिद्ध हुआ। इस दृष्टान्त से विदित हुआ, कि बालक जैसा बनेगा, वैसा लक्षण बचपन ही में देखा जा सकता है।

स्वामी दयानन्द सरस्वती जी बचपन में पुराण सेवक थे, किन्तु उनके मस्तक की प्रवृत्ति उससे विपरीत थी यह दूसरी बात है, कि स्वामीजी जो कुछ करना चाहते थे, वह कर गये। या बनना चाहते थे वह बन गये। परन्तु उनको रोकने के लिये उनके पिता ने कोई भी उद्योग शेष नहीं रक्खा था। यदि वह आजीवन ब्रह्मचारी रहकर महान उपदेशक बनना चाहते थे, तो उनके पिता जी को उन को विवाह श्रृंखला में जबरदस्ती बांध, गृहस्थ बनाने को इस प्रकार मजबूर करना उचित न था। स्वामी जी के दृष्टान्त से हमारा यह कहना है कि, भारतवर्ष में इसी भांति न मालूम कितने बच्चे प्रकृति के उलटे प्रवाह में बहाये

www.thearyasamaj.org

जाते हैं। विलाअत वाले इस सिद्धान्त में सत्य शोधक हैं। किन्तु इस बात से यह अभिप्राय नहीं है, कि आप बिना सोचे विचारे सन्तान की इच्छा पूर्ति करते रहें। यदि बच्चा किसी वस्तु के पाने के लिये रोने लगा, और आपने वह वस्तु उसको देदी इस प्रकार यदि किसी समय उस वस्तु का प्राप्त करना असम्भव अथवा कष्टदायक हो जाय, कि जिसके लिये बच्चा रोने लगा है, तो अन्त में वह रोता 2 स्वास्थ्य बिगाड़ेगा, गले को बैठा लेगा, और घर की शान्ति मेंट एक हठी मनुष्य बनने के सांचे में ढल जायगा। इससे तो वही अच्छा है, कि यदि दो एक बार वह किसी वस्तु को मांगे, और वह न मिले तो पुनः नहीं रोयेगा, क्योंकि वह जान लेगा कि उसका रोना लाभदायक नहीं होता है। इसी प्रकार सूक्ष्म से सूक्ष्म बात पर विचार करना चाहिये। किस छोटी बात का अन्त में क्या परिणाम हो सकता है, इस बात पर ध्यान रखना चाहिये। इस प्रकार सन्तति के उत्पत्ति के बाद झूले (हिंडोले) ही से शिक्षा प्रारम्भ हो जाती है।

अन्य जीवों से, मनुष्य जीव का बच्चा अधिक परतन्त्र होता है। पशुओं के बच्चे कम से कम यह जानते हैं, कि उनको क्या और कहां से भोजन प्राप्त करना होगा। इसके अन्तर सदी, गर्मी आदि का उन पर उतना अधिक प्रभाव नहीं पड़ता। मनुष्य संतति सिवाय रोने के और कोई उपाय नहीं कर सकती। यहां तक कि मुख पर से मक्खी भी नहीं उड़ा सकती। मनुष्य पुत्र के माता, पिता पशुओं से अधिक बुद्धिमान होते हैं, शायद परमात्मा ने इसी कारण मनुष्य सन्तति को इतना पराधीन बनाया है। यदि एक दिन भी उसके साथ लापरवाही की जाय तो उसके प्राण निकल जायें किन्तु इससे यह न समझ लेना चाहिये, कि मनुष्य बुद्धिमान होने के कारण अपनी संतति की यथावत् रक्षा कर लेता है। नहीं, मूर्खता और दरिद्रता के कारण देश में पचास फीसदी बच्चे मृत्यु को प्राप्त होते हैं। यह बात सप्रमाण है। रूस देश में, यूरोप के अन्यायन्य सारे प्रदेशों से अधिक सन्तान होती है। किन्तु वहां यह हाल है कि जिस माता के बीस सन्तति हुई, उसके यहां चार या पांच ही औलाद जिन्दा होती है। भारतवर्ष में भी कम सन्तान नहीं मरती। कहने को रोग से अधिक मृत्यु होती है, पर वास्तव में रोग से नहीं, मूर्खता और दरिद्रता से ही मृत्यु होती है। बीमारी कोई ऐसी वस्तु नहीं है जो हटाई न जा सके। आवश्यकता, विद्या और धन की है। यदि दूषित और निर्बल वीर्य जनित पुत्र न हो तो उसको मरना ही नहीं चाहिये।

किन्तु यदि उत्पत्ति के समय बच्चा कमजोर हो तो उसके सम्बन्ध में यह विचार करना कि यह निर्बलता सर्वथा वीर्य का कारण है। और यदि हृष्ट पुष्ट हो तो सर्वदा निरोग वीर्य का फल है, भ्रममूलक है। वीर्य की निर्बलता और बलता पिता से जानी जा सकती है। बहुधा देखा गया है, कि कमजोर बच्चे बाद को बलिष्ठ, और रुष्ट पुष्ट मृत्यु को प्राप्त हो जाते हैं। फ्रांस का सुप्रसिद्ध कवि शिरोमणि 'वकूर हियूगो' बचपन में इतना निर्बल और दुबला था कि उसकी माता को उसकी मृत्यु का भय सदा बना रहता था। बल्कि जिस समय वह पैदा हुआ था, तो दाया ने उसको मृतक पुत्र अनुमाना था। किन्तु विद्वान माता पिता के कारण वह 83 वर्ष की अवस्था में अत्यन्त सुन्दर स्वास्थ्य भोग करता हुआ परलोकगामी हुआ। 'सेंडो' जो इस समय प्रो0 राममूर्ति के समान है, एवं स्वयं प्रो0 राममूर्ति बचपन में कमजोर थे। और अब वह क्या हैं? इसके बतलाने की आवश्यकता नहीं है।

कुछ लोगों का विचार है, कि कमजोर बच्चों का मर जाना हानिकारक नहीं है। हम भी कहते हैं

कि जिनके माता पिता दोनों या एक तपेदिक के रोगी हों, अथवा शराब के व्यसनी हों, उनकी सन्तान का मर जाना ही अच्छा। हिसाब लगाने से मालूम हो गया है, कि दुनियां भर में जितने पापी, पागल और आलसी हैं उनमें सौ के -निन्यानवे माता या पिता शराबी थे।

इस सम्बन्ध में एक और आवश्यक बात ध्यान देने योग्य है यद्यपि सन्तान नाजुक हुआ करती है और कुछ दिनों तक उसको सर्दी, गर्मी से बचाने का प्रयत्न भी करना लाभदायक होता है। किन्तु समय पाकर सर्वदा इस बात का ध्यान रखना चाहिये, कि लड़के के हाथ पैर सूखे हों और वह अपनी शारीरिक शक्ति बढ़ाने में आपसे सहायता ले सके। अथवा आप बारम्बार ऐसे अवकाश दें, कि जिससे यह बराबर हृष्ट-पुष्ट होता जाय, दुबला या नाजुक न रहे। ❀❀❀

हम फौलादी लाल देश के

रचयिता-बलवीरसिंह 'करुण'

हम फौलादी लाल देश के हम फौलादी लाल!
शीश हमारे झुकें नहीं, पाँव हमारे थके नहीं,
गोले बरसें या शोले उठे कदम ये रुकें नहीं।
हम बैरी के काल भयानक, हम बैरी के काल।
हम फौलादी लाल देश के हम फौलादी लाल!
इस धरती से प्यार हमें, इसने दिया दुलार हमें,
इस पर शीश चढ़ाने का है मौलिक अधिकार हमें।
हम प्रज्ज्वलित मशाल सुनो रे हम प्रज्ज्वलित मशाल।
हम फौलादी लाल देश के हम फौलादी लाल!
ना पंजाबी, मद्रासी, राजस्थानी,. बंगाली,
एक हार के मोती हैं-सभी दिशाओं के वासी।
हम जननी की माल मनोहर, हम जननी की माल॥
हम फौलादी लाल देश के हम फौलादी लाल!
राष्ट्र देवता है अपना, यह अपना सुन्दर सपना,
भारत माँ के मन्दिर में, देश प्रेम हमको जपना।
सबसे ऊँचा भाल देश का सबसे ऊँचा भाल।
हम फौलादी लाल देश के हम फौलादी लाल!

पाठकों से नम्र निवेदन

'तपोभूमि' मासिक पत्रिका के उन पाठकों से निवेदन है जिन्होंने वर्ष 2016 का शुल्क अभी तक जमा नहीं कराया है वे वर्ष 2017 के वार्षिक शुल्क के साथ शीघ्र ही **'सत्य प्रकाशन'** कार्यालय को जमा करायें ताकि पत्रिका व विशेषांक सुचारू रूप से आपको प्राप्त होते रहें। इस वर्ष का विशेषांक **"भारत और मूर्तिपूजा"** छपकर तैयार हो रहा है बहुत जल्दी ही आपके हाथों में होगा। **आप यथाशीघ्र बकाया शुल्क भिजवायें।** **-व्यवस्थापक तपोभूमि मासिक**

www.thearyasamaj.org

झाँसी की रानी

रचयिता-सुभद्राकुमारी चौहान

सिंहासन हिल उठे, राजवंशों ने भृकुटी तानी थी,
बूढ़े भारत में भी आयी फिर से नयी जवानी थी,
गुमी हुई आजादी की कीमत सबने पहचानी थी,
दूर फिरंगी को करने की सबने मन में ठानी थी,

चमक उठी सन सत्तावन में, वह तलवार पुरानी थी,
बुन्देले हरबोलों के मुँह हमने सुनी कहानी थी-
खूब लड़ी मर्दानी वह तो झाँसी वाली रानी थी।

कानपूर के नाना की, मुँहबोली बहन 'छबीली' थी,
लक्ष्मीबाई नाम, पिता की वह सन्तान अकेली थी,
नाना के संग पढ़ती थी वह, नाना के संग खेली थी,
बरछी, ढाल, कृपाण, कटारी उसकी यही सहेली थी,

वीर शिवाजी की गाथाएँ उसको याद जबानी थीं,
बुन्देले हरबोलों के मुँह हमने सुनी कहानी थी-
खूब लड़ी मर्दानी वह तो झाँसी वाली रानी थी।

लक्ष्मी थी या दुर्गा थी वह स्वयम् वीरता की अवतार,
देख मराठे पुलकित होते उसकी तलवारों के वार,
नकली युद्ध-व्यूह की रचना और खेलना खूब शिकार,
सैन्य घेरना, दुर्ग तोड़ना ये थे उसके प्रिय खिलवार,

महाराष्ट्र-कुल-देवी उसकी भी आराध्य भवानी थी,
बुन्देले हरबोलों के मुँह हमने सुनी कहानी थी-
खूब लड़ी मर्दानी वह तो झाँसी वाली रानी थी।

हुई वीरता की वैभव के साथ सगाई झाँसी में,
ब्याह हुआ रानी बन आयी लक्ष्मीबाई झाँसी में,
राज महल में बजी बधाई खुशियाँ छायीं झाँसी में,
सुभट बुन्देलों की विरुदावलि-सी वह आयी झाँसी में,

www.thearyasamaj.org

चित्रा ने अर्जुन को पाया, शिव से मिली भवानी थी,
बुन्देले हरबोलों के मुँह हमने सुनी कहानी थी,
खूब लड़ी मर्दानी वह तो झाँसी वाली रानी थी।

उदित हुआ सौभाग्य, मुदित महलों में उजियाली छायी,
किन्तु काल-गति चुपके-चुपके काली घटा घेर लायी,
तीर चलाने वाले कर में उसे चूड़ियाँ कब भायीं!
रानी विधवा हुई, हाय! विधि को भी नहीं दया आयी!

निःसन्तान मरे राजा जी रानी शोक-समानी थी,
बुन्देले हरबोलों के मुँह हमने सुनी कहानी थी,
खूब लड़ी मर्दानी वह तो झाँसी वाली रानी थी।

बुझा दीप झाँसी का तब डलहौजी मन में हरषाया,
राज्य हड़प करने का उसने यह अच्छा अवसर पाया,
फौरन फौजें भेज दुर्ग पर अपना झंडा फहराया,
लावारिस का वारिस बनकर ब्रिटिश राज्य झाँसी आया,

अश्रुपूर्ण रानी ने देखा झाँसी हुई बिरानी थी;
बुन्देले हरबोलों के मुँह हमने सुनी कहानी थी,
खूब लड़ी मर्दानी वह तो झाँसी वाली रानी थी।

अनुनय विनय नहीं सुनता है, विकट शासकों की माया,
व्यापारी बन दया चाहता था जब यह भारत आया,
डलहौजी ने पैर पसारे अब तो पलट गयी काया,
राजाओं, नव्वाबों को भी उसने पैरों ठुकराया,

रानी दासी बनी, बनी यह दासी अब महारानी थी।
बुन्देले हरबोलों के मुँह हमने सुनी कहानी थी,
खूब लड़ी मर्दानी वह तो झाँसी वाली रानी थी।

छिनी राजधानी देहली की, लखनऊ छीना बातों-बात,
कैद पेशवा था बिठूर में, हुआ नागपुर का भी घात,
उदैपुर, तंजोर, सतारा, करनाटक की कौन बिसात?
जब कि सिन्ध, पंजाब ब्रह्म पर अभी हुआ था वज्र-निपात,

www.thearyasamaj.org

बंगाले मद्रास आदि की भी तो वही कहानी थी;
बुन्देले हरबोलों के मुँह हमने सुनी कहानी थी,
खूब लड़ी मर्दानी वह तो झाँसी वाली रानी थी।

रानी रोयीं रनिवासों में, बेगम गम से थीं बेजार,
उनके गहने-कपड़े बिकते थे कलकत्ते के बाजार;
सरे-आम नीलाम छापते थे अंग्रेजों के अखबार,
'नागपूर से जेवर ले लो' लखनऊ के लो नौलख हार',

यों परदे की इज्जत परदेशी के हाथ बिकानी थी;
बुन्देले हरबोलों के मुँह हमने सुनी कहानी थी,
खूब लड़ी मर्दानी वह तो झाँसी वाली रानी थी।

कुटियों में थी विषम वेदना, महलों में आहत अपमान,
वीर सैनिकों के मन में था अपने पुरखों का अभिमान;
नाना धुन्धू पन्त पेशवा जुटा रहा था सब सामान,
बहन छबीली ने रण-चंडी का कर दिया प्रकट आह्वान!

हुआ यज्ञ प्रारम्भ उन्हें तो सोयी ज्योति जगानी थी,
बुन्देले हरबोलों के मुँह हमने सुनी कहानी थी,
खूब लड़ी मर्दानी वह तो झाँसी वाली रानी थी।

महलों ने दी आग, झोपड़ी ने ज्वाला सुलगाई थी,
यह स्वतन्त्रता की चिनगारी अन्तरतम से आयी थी,
झाँसी चेती, दिल्ली चेती, लखनऊ लपटें छायी थी,
मेरठ, कानपूर, पटना ने भारी धूम मचायी थी,

जबलपुर कोल्हापुर में भी कुछ हलचल उकसानी थी;
बुन्देले हरबोलों के मुँह हमने सुनी कहानी थी,
खूब लड़ी मर्दानी वह तो झाँसी वाली रानी थी।

इस स्वतन्त्रता-महायज्ञ में कई वीरवर आये काम,
नाना धुन्धूपन्त, ताँतिया, चतुर अजीमुल्ला सरनाम;
अहमदशाह मौलवी, ठाकुर कुँवरसिंह सैनिक अभिराम,
भारत के इतिहास-गगन में अमर रहेंगे जिनके नाम,

www.thearyasamaj.org

लेकिन आज जुर्म कहलाती उनकी जो कुरबानी थी,
बुन्देले हरबोलों के मुँह हमने सुनी कहानी थी,
खूब लड़ी मर्दानी वह तो झाँसी वाली रानी थी।

इनकी गाथा छोड़ चलें हम झाँसी के मैदानों में,
जहाँ खड़ी है लक्ष्मीबाई मर्द बनी मर्दानों में,
लेफ्टिनेंट वौकर आ पहुँचा, आगे बढ़ा जवानों में,
रानी ने तलवार खींच ली, हुआ द्वन्द्व असमानों में;

जख्मी होकर वौकर भागा, उसे अजब हैरानी थी,
बुन्देले हरबोलों के मुँह हमने सुनी कहानी थी,
खूब लड़ी मर्दानी वह तो झाँसी वाली रानी थी।

रानी बढ़ी कालपी आयी, कर सौ मील निरन्तर पार,
घोड़ा थककर गिरा भूमि पर, गया स्वर्ग तत्काल सिधार,
यमुना तट पर अंग्रेजों ने फिर खायी रानी से हार,
विजयी रानी आगे चलदी,किया ग्वालियर पर अधिकार,

अंग्रेजों के मित्र सिन्धिया ने छोड़ी रजधानी थी;
बुन्देले हरबोलों के मुँह हमने सुनी कहानी थी,
खूब लड़ी मर्दानी वह तो झाँसी वाली रानी थी।

विजयी मिली, पर अंग्रेजों की फिर सेना घिर आयी थी,
अबके जनरल स्मिथ सम्मुख था, उसने मुँह की खायी थी,
राना और मन्दरा सखियाँ रानी के संग आयी थीं,
युद्ध क्षेत्र में उन दोनों ने भारी मार मचायी थी;

पर पीछे ह्यू रोज आ गया, हाय! घिरी अब रानी थी;
बुन्देले हरबोलों के मुँह हमने सुनी कहानी थी,
खूब लड़ी मर्दानी वह तो झाँसी वाली रानी थी।

तो भी रानी मार-काट कर चलती बनी सैन्य के पार,
किन्तु सामने नाला आया, था यह संकट विषम अपार,
घोड़ा अड़ा, नया घोड़ा था, इतने में आ गये सवार,
रानी एक, शत्रु बहुतेरे, होने लगे वार-पर-वार;

www.thearyasamaj.org

घायल होकर गिरी सिंहनी उसे वीरगति पानी थी;
बुन्देले हरबोलों के मुँह हमने सुनी कहानी थी,
खूब लड़ी मर्दानी वह तो झाँसी वाली रानी थी।

रानी गयी सिधार, चिता अब उसकी दिव्य सवारी थी,
मिला तेज से तेज, तेज की वह सच्ची अधिकारी थी,
अभी उम्र कुल तेइस की थी, मनुज नहीं अवतारी थी,
हमको जीवित करने आई बन स्वतन्त्रता नारी थी;

दिखा गई पथ, सिखा गयी हमको जो सीख सिखानी थी;
बुन्देले हरबोलों के मुँह हमने सुनी कहानी थी,
खूब लड़ी मर्दानी वह तो झाँसी वाली रानी थी।

जाओ रानी ! याद रखेंगे ये कृतज्ञ भारतवासी,
यह तेरा बलिदान जगावेगा स्वतन्त्रता अविनाशी,
होवे चुप इतिहास, लगे सच्चाई को चाहे फाँसी,
हो मदमाती विजय, मिटा दे गोलों से चाहे झाँसी;

तेरा स्मारक तू ही होगी, तू खुद अमिट निशानी थी,
बुन्देले हरबोलों के मुँह हमने सुनी कहानी थी,
खूब लड़ी मर्दानी वह तो झाँसी वाली रानी थी।

❁❁❁

पृष्ठ सं. 26 का शेष

कोई सन्देह नहीं कि परमात्मा अपनी इच्छा, प्रेरणानुसार हमें सहज ही लक्ष्य तक पहुँचा देंगे। प्रभु की प्रेरणा इच्छा सदैव दिव्य होती है। दिव्य प्रेरणाओं से मानव जीवन दिव्य कर्मों में प्रयुक्त होने लगता है और मनुष्य सहज ही श्रेय की प्राप्ति कर लेता है। आत्मा की परिपूर्णता प्राप्त होकर परमात्मा में गति मिलती है।

इसीलिए मनीषियों ने ज्ञान विज्ञान उपासना साधना के क्षेत्र में पर्याप्त खोज करने के उपरान्त भी कहा है 'पिता नोऽसि।' आप हमारे पिता हैं, आप ही हमारी माँ हैं। आप ही बन्धु सखा सर्व कुछ आप ही हैं। आप ही सर्वोपरि विद्या, धन सम्पदायें हैं। आप ही हमारे जीवन के देवाधिदेव सर्वेश्वर प्रभु हैं।'

परमात्मा में प्रतिष्ठित होने के लिये उन्हें प्राप्त करने के लिये अपने समस्त जीवन की बागडोर उन्हीं के हाथों में सौंपनी पड़ेगी। उन्हें ही हृदय-मन्दिर में प्रतिष्ठित करना होगा। ❁❁❁

www.thearyasamaj.org

पति-पत्नी का झगड़ा

लेखकः डॉ० हरिनन्दन पाण्डेय

धर्मशास्त्रों में विवाह एक पवित्र बन्धन माना गया है। गृहस्थरूपी गाड़ी के स्त्री और पुरुष दो पहिये हैं। बिना इन दोनों पहिये के पारस्परिक सहयोग के यह छकड़ा चल नही सकता। दूसरे शब्दों में, विवाह दो आत्माओं को सुखद बन्धन में आबद्ध करता है। **'ओं गृभ्णामि ते सौभागत्वाय हस्तं मया जरदष्टिर्यथासः'** इस पवित्र वेद मन्त्र द्वारा वर-वधू से कहता है, 'प्रिय! मैं अग्नि तथा तुम्हारे माता-पिता के समक्ष, तुम्हें इस हेतु ग्रहण करता हूं कि मेरे साथ वृद्धावस्था को प्राप्त हो तथा हम दोनों पारस्परिक प्रेम एवं सन्तोष से अपना जीवन व्यतीत करें।' वधू भी इसी प्रतिज्ञा को दुहराती है।

कहने को तो आज भी विवाह-मण्डप पर इसी मन्त्र का पाठ किया जाता है, परन्तु इसमें वास्तविकता का कितना अंश होता है? सच पूछिये, तो आज 90 प्रतिशत वर-वधू इन मन्त्रों के अर्थ तक नहीं जानते, उनका अनुसरण करना तो दूर रहा।

आज हम देखते हैं कि बहुत कम दम्पत्तियों का जीवन सुखमय है। हमारी समझ इसका एकमात्र कारण एकदूसरे का व्यवहार ऐसा न होगा कि दोनों उसमें अपने प्रति अनन्य प्रेम की झलक देख सकें। नीचे हम पति-पत्नियों के लिए सुझाव दे रहे हैं, और आशा है कि यदि इन पर अमल किया गया, तो बहुत हद तक दाम्पत्य-जीवन सुखी रह सकता है।

पति क्या करें-

(1) जब आप दफ्तर से लौटें, तो आप चुप्पी से परहेज कीजिए। क्योंकि काफी अर्से से बिछुड़ी आपको पत्नी आपस में चार बातें करने के लिए व्याकुल रहती हैं। क्योंकि नारी प्रेम की भूखी होती है।

(2) अपनी पत्नी को हेयदृष्टि से मत देखिये। उसे मजदूरिन या रसोइया न समझें। आप याद रखिये कि वह आपकी अर्द्धांगिनी, सहकर्मिणी एवं सहयोगिनी भी हैं। जहाँ वह हृदय की रानी बन सकती हैं, वहीं वह चरण की दासी भी हो सकती है।

(3) अपनी पत्नी के सामने परायी औरत की सुन्दरता या उसके गुणों का वर्णन न करें। क्योंकि स्त्रियाँ स्वभावतः अपने से बढ़कर किसी दूसरी स्त्री को सुन्दरी तथा गुण सम्पन्न देखना-सुनना नहीं चाहतीं।

(4) आप भले ही विद्वान् चाहे गुणवान् क्यों न हों आपकी पत्नी में संभवतः ऐसी शक्ति न हो कि वह आपके गुणों की परख कर सके। अतः आपका फर्ज है कि आप उसके प्रति अपने प्रेम का इजहार हमेशा करते रहिये।

(5) इस बात को आप दिल में बैठा लीजिये कि शाम होते ही आप घर पर पहुंच जायेंगे।

www.thearyasamaj.org

अधिक रात बीते लौटने पर मुमकिन है कि उसके दिल में शंका का कीटाणु प्रवेश कर जाये।

(6) अपनी पत्नी के छोटे-छोटे कामों की भी तारीफ कर दिया कीजिये। साथ ही उसके सामने उसके पीहर के विरुद्ध कभी कुछ मत बोलिये।

पत्नियाँ क्या करें–

(1) आप हमेशा बकती-झकती मत रहिये। इससे आपके पतिदेव के रूठ जाने की सम्भावना है। यदि आप समयानुकूल बोलेंगी, तो आपकी बातों को सुनने के लिए वे सर्वदा लालायित रहेंगे।

(2) अपने पतिदेव के प्रति अनन्य प्रेम का इजहार कीजिये और उन्हें भोजन सदैव अपने हाथों से बनाकर श्रद्धापूर्वक खिलाइये जो उन्हें विशेष रुचिकर हों।

(3) संयोगवश, कभी मन-मुटाव हो जाय, तो कोशिश कीजिए कि यथाशीघ्र समझौता हो जाय। क्योंकि अधिक समय रूठे रहने से गह-कलह भीषण रूप धारण कर लेता है। सुलह के बाद इस झगड़े को हमेशा-हमेशा के लिए अपने दिल से निकाल दीजिए।

(4) पतिदेव की कमजोरियों को यथाशक्ति सहन करने की कोशिश कीजिये। साथ ही आप उन्हें यह भी बतलाती रहिये कि उनमें गुण भी बहुत हैं।

(5) पति को अपना दास मत समझिये। वह आपका साथी और मित्र भी है।

(6) आप अपना अधिक समय बनाव-श्रृंगार में मत खर्च कीजिए। पतिदेव का ध्यान रखिये। नारी का रूप शील ही है। सम्भव है आपके बनाव-श्रृंगार में लग जाने से उनकी सेवा में बाधा पड़ जाय और गृह-कलह हो जाए।

(7) आप याद रखिये कि पतिदेव यदा-कदा एकान्त में रहना चाहेंगे। आप उनके इस काम में विघ्न न डालें। उनकी सामाजिक और राष्ट्र सेवा की रुचि में सहयोगी बनें। यदि वैसा सम्भव न हो तो बाधक कदापि नहीं बनें।

(8) अपने पतिदेव की आय के अनुसार ही व्यय कीजिए।

मुझे पूर्ण विश्वास है कि यदि पति-पत्नी इन असूलों पर चलें तो घर में 'सिविल-वार' होने की नौबत ही न आयेगी। साथ ही आवश्यकता है दम्पत्ति में पारस्परिक विश्वास, सहयोग एवं सद्भावना की।

❁❁❁

पृष्ठ सं. 25 का शेष

बड़ी सफलतायें इस बात की अपेक्षा करती हैं कि व्यक्ति में धैर्यपूर्वक देर तक कठिन परिश्रम करते रहने की क्षमता हो ऐसी मनःस्थिति उसी की हो सकती है जिसने आशावाद को अपने स्वभाव का अंग बना लिया हो। छुई-मुई की तरह जरा सी कठिनाई आने पर जो मुरझा जाते है, अवरोधों को राई न मानकर जो पर्वत समझते हैं उनके लिये अपना मानिसिक सन्तुलन बनाये रहना ही एक समस्या है, अपने आपको सँभाल सकना ही जिनके लिये भार बना हुआ है उनके लिये सफलता के लिये जितनी शक्ति आवश्यक है उतनी जुटा सकना किसी भी प्रकार सम्भव न हो सकेगा और वे हर काम में हर बार असफल ही होते रहेंगे। आशा रहित जीवन एक प्रकार से निर्जीव ही कहा जा सकता है। ❁❁❁

www.thearyasamaj.org

निराशग्रस्त-निर्जीव और निरर्थक जीवन

निराशा का दूसरा नाम है-भय, बेचैनी और अशान्ति। भविष्य को अन्धकार में देखना और प्रस्तुत विपत्ति को अगले दिनों और अधिक बढ़ती हुई सोचना एवं ऐसा स्वविनिर्मित संकट है जिसके रहते, सुखद परिस्थितियाँ प्राप्त कर सकना कदाचित ही सम्भव हो सके।

सोचने का एक तरीका यह है कि अपना गिलास आधा खाली है और अभावग्रस्त स्थिति सामने खड़ी है। सोचने का दूसरा तरीका यह है कि अपना आधा गिलास भरा है जबकि सहस्रों पात्र बिना एक बूँद पानी के खाली पड़े हैं। अभावों को कठिनाइयों को सोचते रहना एक प्रकार की मानसिक दरिद्रता है।

जो रात्रि के अन्धकार को ही शाश्वत मान बैठा और जिसे यह विश्वास नहीं कि कुछ समय बाद अरुणोदय भी हो सकता है उसे बौद्धिक क्षेत्र का नास्तिक कहना चाहिए। दार्शनिक नास्तिक वे हैं जो सृष्टि की अव्यवस्थाओं को तलाश करके यह सोचते हैं कि दुनिया बिना किसी योजना व्यवस्था क्रम सूझते ही नहीं। ईश्वर का अस्तित्व और कर्तव्य उनकी दृष्टि से ओझल ही रहता है। ठीक इसी प्रकार की बौद्धिक नास्तिकता वह है जिसमें जीवन के ऊपर विपत्तियों और असफलताओं की काली घटाएँ ही छाई दीखती हैं। उज्ज्वल भविष्य के अरुणोदय पर जिन्हें विश्वास ही नहीं जमता।

जीवन का पौधा आशा के जल से सींचे जाने पर ही बढ़ता और फलता-फूलता है। निराशा के तुषार से उसका अस्तित्व ही संकट में पड़ जाता है। उज्ज्वल भविष्य के सपने देखते रहने वाला आशावादी ही उनके लिये ताना-बाना बुनता है। प्रयत्न करता है-साधन जुटाता है और अन्ततः सफल होता है। यह सही है कि कई बार आशावादी स्वप्न टूटते भी हैं और गलत भी साबित होते हैं पर साथ ही यह भी सत्य है कि उजले सपनों का आनन्द कभी झूठा नहीं होता। वह प्रकाश तब तक अन्तर में बना रहेगा जब तक ऐसी गुदगुदी बनी रहेगी जो मनोरथ पूरा न होने पर भी उस उपलब्धि जैसा ही उल्लास बनाये रहे। यह उज्ज्वल सपनों का आनन्द जब अभ्यास में आता है तब इतना मधुर होता है कि उसे बनाये रखने के लिए कठिन से कठिन कर गुजरने की हिम्मत की जा सके।

मुसीबतें और असफलताएँ सिर्फ यह जानने के लिये आती हैं कि व्यक्ति किस हद तक साहस सँजोये रह सकता है जिन्होंने हर कठिनाई को एक चुनौती माना उसके लिए इस संसार में कोई अवरोध नहीं, छात्रों को आये दिन अध्यापक के पूछे प्रश्नों को हल करना पड़ता है। तभी उसे उत्तीर्ण होने की प्रतिष्ठा प्राप्त होती है। अवरोध एक प्रकार का अध्यापक है जो प्रतिभा को विकसित करने के लिये उत्तेजना प्रदान करता है और चिर स्मरणीय सफलता वरण कर सकने की क्षमता से सुसम्पन्न बनाता है। जो कठिनाई के दिनों में आशावादी रह सका, समझना चाहिए पुरुषार्थी महामानवों की पंक्ति में उसी का अभिषेक किया जाने वाला है।

शेष पृष्ठ सं. 24 पर

www.thearyasamaj.org

आत्म-समर्पण द्वारा प्रभु भक्ति

हमारे समस्त दुःख वेदनायें इसलिए हैं कि हम अहं की गठरी में जीवन के सकल हानि-लाभ, हार-जीत, सुख-दुःख, उतार-चढ़ाव के भारी बोझ को बांधकर सदैव अपने ऊपर लादे फिरते हैं और क्षण-क्षण अनेक आघात संघात सहते रहते हैं। जिस क्षण अपने अहं को मिटाकर सर्वभावेन प्रभु समक्ष अपने आपको समर्पित कर देंगे तो यह समस्त बोझा हमसे तत्क्षण ही छूट जायगा। अहंकार की मृत्यु के साथ ही जीवन के समस्त विरोधी भाव प्रवृत्तियाँ नकारात्मक विचार शान्त हो जायेंगे। हमारा जीवन प्रभु की ओर उसी तरह बहने लगेगा जैसे अनुकूल हवा की लहरों का संयोग पाकर मंजिल की ओर बढ़ने वाली नाव।

लम्बे बीहड़ दुर्गम पथ पर एक अबोध अक्षम बालक का चल सकना कितना कठिन होता है? उसके दुर्बल कमजोर हाथ पैर और अल्प जीवनी शक्ति के भरोसे मंजिल प्राप्त करने की आशा नहीं की जा सकती। किन्तु वही बालक पिता के अंक में बैठकर सहज ही उस लम्बे पथ को पार कर लेता है। किन्तु वह तभी सम्भव है जब सम्पूर्ण भाव से अपने आपको पिता के अंक में सौंप दिया जाय। तब पिता का अंक ही उसके लिए मंजिल बन जाती है।

परमात्मा के साक्षात्कार, उनमें प्रतिष्ठित होने का सरल और सहज मार्ग है अपने शक्ति सामर्थ्य, कर्तव्य के अभिमान का त्याग करना और सम्पूर्ण भाव से परमात्मा को अपने आपका निवेदन समर्पण करना। तब सर्वत्र ही सबके साथ समानता, नम्रता, उदारता, आत्मीयता का सम्बन्ध बढ़ता जाता है। अपने लिए नहीं वरन् सबके लिए हमारा जीवन होगा। सबके हित में अपना हित, सबके सुख में अपना सुख, यदि इन उदार भावनाओं और चरित्र का गठन नहीं होता है तो हमारा आत्म-समर्पण अधूरा है, अथवा हम आत्म-समर्पण का स्वाँग रच रहे हैं।

ईश्वर के प्रति आत्म-समर्पण करने का यह भी अर्थ नहीं है कि हम जो कुछ करें वह सब ईश्वर कर रहे हैं। यदि यह धारण बना ली जायेगी तो एक बड़ी भूल होगी और हमारे आध्यात्मिक जीवन में एक गम्भीर दुर्घटना समझी जायगी। आत्म-समर्पण के नाम पर अपनी बुराइयों, दुष्कृत्यों को पोषण देना, अपनी अकर्मण्यता और भाग्यवाद को प्रश्रय देता, अपने कृत्यों द्वारा प्राप्त असफलता को ईश्वर के मत्थे मढ़ना, आत्म-समर्पण की भावना के अनुकूल नहीं है। वह तो एक तरह की बिडम्बना और आत्म-प्रवंचना है। समर्पण का अर्थ है-पूर्णरूपेण प्रभु को हृदय में स्वीकार करना, उनकी इच्छा प्रेरणाओं के प्रति सदैव जागरूक रहना, जीवन के प्रत्येक क्षण में उसे परिणित करते रहना।

प्रभु आपकी क्या इच्छा है? आपका क्या आदेश है देव! वह प्रश्न अन्तर में उठता रहे तो इसमें

शेष पृष्ठ सं. 22 पर

www.thearyasamaj.org

अपने चेतन स्वरूप को मत भूलो!

लेखकः स्वामी श्रद्धानन्द सरस्वती

"ठीक जैसा हूँ वैसा नहीं जानता कि यह मैं हूँ, (किन्तु) विचार से ठीक बंधा हुआ (जब) अन्तर्निहित विचारता हूँ (तब) पता लगता है कि (जब) पहले प्रकाशित हुए पंचभूत मुझ जीवात्मा को प्राप्त हुए, उसक पीछे ही मैं सत्य ज्ञान और (उस सत्यज्ञान को दूसरों तक पहुँचाने वाली) इस वाणी रूपी भाग को प्राप्त होता हूँ।"

मैं क्या हूँ? यह प्रश्न सृष्टि के आदिकाल में जैसा आकाश में गूंज उठा था, वैसा आज भी वायु मण्डल में भरपूर हो रहा है। सब कुछ मेरे लिये ही है, मैं सर्वोपरि हूँ, मैं ही सृष्टि का स्वामी हूँ। इस प्रकार की अन्धी लहरें किस हृदय के अन्दर नहीं उठ चुकीं? किन्तु क्या इस लहर में बहे जाते हुए, कभी यह भी विचार किया है कि मैं वास्तव में क्या हूँ? जब यह विचार उत्पन्न होता है तभी तो अन्दर की आँखों के पट खुलते हैं और मनुष्य अपने वास्तविक स्वरूप को देखने का प्रयत्न करता है। जिस प्रकार बल से फेंकी हुई लहरें सामने टक्कर लगने पर एकदम पीछे हटकर गिर पड़ती हैं, वैसे हम मनुष्यों को विचाररूपी लहर की एक टक्कर लगती है। इतिहास प्रसिद्ध आँगल राजा की तरह जब वह उन्मत्त होकर जलवायु तक को शासन की धमकी देने लगता है, तब इन दैवी शक्तियों से पटखनी खाकर कहीं का कहीं जा गिरता है। अब न वह ऊर्ध्वारोहण है, और न आकाश की सैर, अब पाताल की सुध लेने जा रहा है। कहाँ चला गया? कहाँ तेज और कहाँ मैं? मिट्टी का जब मैं हूँ तब मिट्टी में ही आनन्द ढूंढूं।

पंचभूतों का शरीर प्राप्त करके ही तो मैं मन और वाणी का स्वामी बना। तब यही मेरे स्वामी हैं। इनका हो रहूँगा तो आनन्द मिलेगा। यह आकाश में उड़ना अब दूर हो गया। मिट्टी में लथपथ होकर मिट्टी बन गया। जब भौतिक जगत् को सर्वथा स्वप्नवत् जानता था, जब अपने आपको सर्वोपरि समझता था, तब एक प्रकार का आह्लाद था, तब कोई बलात् नीचे तो नहीं धकेल रहा था किन्तु अब तो बोझ के मारे दब रहा है। उठ सकता नहीं, अपने आपको जड़ का बना समझकर चेतनता को जबाब दे बैठा है। देखते हुए भी नहीं देखता, सुनते हुए भी नहीं सुनता है, जीते हुए भी अपने को धोका दे बैठा। अपने आपको भौतिक समझता हुआ जिधर भौतिक भोग ले जाते हैं, उधर ही चल देता है। अन्दर वाला अपने स्वरूप को कभी-2 समझने लगता है, उसे चेतना का भ्रम सा होने लगता है, परन्तु भोग रूपी जादू की छड़ी फिर सिर पर घूम जाती है और वह उसी के इशारे पर उल्टा-सीधा होता हुआ विविध प्रकार की बोलियाँ बोलने लगता है। हा! मरण धर्मा शरीर के साथ मिलकर अमर की कैसी शोचनीय दशा हो गई? ऐसे विकट समय में भगवती श्रुति मधुर स्वर से कैसा शान्तिदायक उपदेश देती है।

www.thearyasamaj.org

न विजानामि यदि वेदमस्मि निण्यः सन्नद्धो मनसा चरामि।
यदा मागन्प्रथमजा ऋतस्यादिद्वाचो अश्नुवे भागमस्याः॥
आपाङ् प्राङति स्वधया गृभीतोऽमर्त्यो मर्त्येना सयोनिः।
ता शश्वन्ता विशूचीना वियन्ता न्यन्यं चिक्युनं नि चिक्युरन्यं।

–ऋ0 1। 164। 37–38

'अन्नादि भोग पदार्थों से उल्टा–सीधा हुआ मरण धर्म रहित जीवात्मा मरण धर्म सहित शरीरादि के साथ एक स्थान वाला हो रहा है। इन दोनों के मिलाप का ही परिणाम गति और अनेक प्रकार की क्रिया करना है। एक (इस रहस्य) को निरन्तर जानते और दूसरे नहीं जानते हैं।'

मुर्दा क्या जान सकता है? सजीव मनुष्य ही सब कुछ जान सकता है? अविद्वान् उड़ेगा तो उड़ता ही रहेगा और यदि गिरेगा तो कीचड़ में लथपथ होकर सडाँद का कीड़ा हो जायेगा। किन्तु विद्वान् जानता है कि वह क्या है? वह अपने स्वरूप को पहचानता है। वह जानता है कि पंच भौतिक शरीररूपी साधन को लेकर ही वह इस जगत् में अपना उद्देश्य पूरा करने को आया है साथ ही वह भली प्रकार अनुभव करता है कि वह जड़ नहीं है। प्रकृति के साथ जिस प्रकार परम पुरुष का मेल सनातन है, उसी प्रकार जीवात्मा का सम्बन्ध भी प्राकृतिक जगत् के साथ सदा रहता है। इसलिये प्रकृति को सर्वथा भुलाकर वह अपने स्वरूप को ही भूल जाता है, जिसका परिणाम दुःख होता है। भौतिक शरीर रखते हुए जिन भूले भटकों ने इन्द्रियों को भोगों से सर्वथा जुदा रखा उन्होंने ठोकर खाई। रुकावट सामने आने पर, जब उनकी इच्छाओं को पलटा मिला तो वे दूसरी सीमा पर पहुँचकर इन्द्रियों के दास हो गये। उन्होंने सर्वथा भुला दिया कि वे अमर हैं और आत्मा हैं। इसलिए श्रुति ने स्थान–2 पर समता की अवस्था स्थिर करने का उपेदश दिया है। वेद का उपदेश सर्वकाल में स्मरण रखने योग्य है। भौतिक शरीर को भौतिक की जितनी आवश्यकता है, उससे बढ़कर मानसिक शरीर को आत्मिक भोजन की आवश्यकता है। इसलिए, हे आत्मा के स्वामी और ज्ञान के भण्डारी! अपने निज स्वरूप को हम प्रकाशहीन दीनों के लिए प्रकाशित करो जिससे हम आपके प्रकाशरूपी दर्पण में अपने स्वरूप को देखकर उसकी वास्तविक उन्नति का प्रयत्न करते रहें। ❀❀❀

भूल रहा संसार में, अब लौं रहा अचेत।
फल की आशा छोड़ दे, उजड़ा जीवन खेत॥
प्रभुता का प्रेमी बना, प्रभु से किया न मेल।
रे धर्मध्वजी पाप के, खेल खुल–खुल खेल॥

www.thearyasamaj.org

मृत्यु स्वीकारने की सिद्धता

लेखकः श्रीपाद दामोदर सातवलेकर

मृत्योरहं ब्रह्मचारी यदस्मि निर्याचन् भूतात्पुरुषं यमाय।।
तमहं ब्रह्मणा तपसा श्रमेणानयैनं मेखलया सिनामि।। अ.6।133।3

(मृत्योः ब्रह्मचारी) मैं मृत्यु को समर्पित हुआ ब्रह्मचारी हूं। इसलिये (भूतात्) मनुष्यों से यम के लिये और एक पुरुष की (याचन्) इच्छा करता हूं। [जो पुरुष आयेगा] उसको भी मैं (ब्रह्मणा) ज्ञान से, तप से, परिश्रम से और इस मेखला से (सिनामि) बांधता हूं।

ब्रह्मचारी का सम्बन्ध मृत्यु अथवा यम से है, इस बात का कथन इस मंत्र में भी है। ब्रह्मचारी भी समझता है कि, मैं अब माता पिता का नहीं हूं, परन्तु मृत्यु को समर्पित हो चुका हूं। अर्थात् घर के प्रलोभन दूर हो चुके हैं। पहिले जन्म से प्राप्त शरीर का मृत्यु होने के पूर्व दूसरा जन्म प्राप्त नहीं हो सकता। इसलिये जो "द्वि-जन्मा" होते हैं, उनको "द्विज" होने के पूर्व एकबार मृत्यु के वश होना ही चाहिये। इस प्रसंग में आचार्य ही मृत्यु का कार्य करता है। माता पिता से प्राप्त शारीरिक और मानसिक स्थिति में योग्य परिवर्तन करना तथा उसको सुयोग्य बनाना आचार्य का कार्य है। कठोपनिषद् में भी इसी दृष्टि से गुरु के स्थान में मृत्यु को ही माना है। ब्रह्मचर्य सूक्त में भी "आचार्य को मृत्यु" ही कहा है। तथा इस मंत्र में स्वयं ब्रह्मचारी कहता है कि "मैं अब मृत्यु को समर्पित हुआ हूं।" इस प्रकार का मृत्यु को समर्पित हुआ ब्रह्मचारी गुरुकुल का विद्यामृत पास करता हुआ आनन्द कह रहा है कि "मैं जनता से और भी पुरुष इसी प्रकार मृत्यु को (आचार्य को) समर्पित करने की इच्छा करता हूं।" अर्थात् ब्रह्मचारी यह भावना चाहिये कि, वह अपने गुरुकुल में और ब्रह्मचारी वहां जायें। ब्रह्मचारियों का परस्पर सम्बन्ध भी "ज्ञान, तप, परिश्रम," आदि उच्च भावों का ही होना चाहिये। एक ब्रह्मचारी का दूसरे सहपाठी से यही सम्बन्ध है। अर्थात् एक ब्रह्मचारी दूसरे को ज्ञान देवे, जो स्वयं जानता है, दूसरे को समझावे। दूसरों के हितार्थ परिश्रम करे और दूसरे का हित करने के लिये स्वयं क्लेश भी सहन करे।

सब ब्रह्मचारी अपने आपको मृत्यु के लिये समर्पित समझें, तथा ब्रह्मचारियों के माता पिता भी समझें कि हमने अपने पुत्र को मृत्यु के लिये ही समर्पित किया है। क्योंकि गुरुकुल में प्रविष्ट हुआ ब्रह्मचारी अब सम्पूर्ण किया है। क्योंकि गुरुकुल में प्रविष्ट हुआ ब्रह्मचारी अब सम्पूर्ण जनता का ही हो चुका है। वह अब केवल माता पिताओं का ही नहीं रहा। वह अब सम्पूर्ण जनता का पुत्र है, जनता उसकी माता है, राष्ट्र उसका पिता है!! इतना ही नहीं परन्तु अब वह ब्रह्मचारी ही स्वयं अपने आपको मृत्यु को समर्पित समझने लगा है!!! जो आनन्द से मृत्यु को ही स्वीकारने के लिये कटिबद्ध होता है, जो अपने अस्थियों की समिधा बनाने के लिये सिद्ध हो चुका है, जो अपने वीर्य बल पराक्रम के आज्य से राष्ट्रीय नरमेध में

www.thearyasamaj.org

आहुतियां देने के लिये उत्सुक है, तथा जो आत्म सर्वस्व की पूर्णाहुति हाथ में लेकर तैयार है, उसको अन्य क्लेश सता नहीं सकते, परिश्रमों के भय से वह स्वकार्य से परावृत्त नहीं हो सकता। यह है ब्रह्मचारी का पराक्रम; अब और देखिये–

पूर्वो जातो ब्रह्मणो ब्रह्मचारी धर्मं वसान स्तपसोदतिष्ठत्।।
तस्माज्जातं ब्राह्मणं ब्रह्म ज्येष्ठं देवाश्च सर्वे अमृतेन साकम्।। 5।।

अर्थ– (ब्रह्मणः पूर्वः) ज्ञान के पूर्व (ब्रह्मचारी जातः) ब्रह्मचारी होता है। (धर्मे वसानः) उष्णता धारण करता हुआ तप से (उत्+अतिष्ठत्) ऊपर उठता है। उस ब्रह्मचारी से (ब्राह्मणं ज्येष्ठं ब्रह्म) ब्रह्म सम्बन्धी श्रेष्ठ ज्ञान (जातं) प्रसिद्ध होता है तथा सब देव अमृत के साथ होते हैं।।

भावार्थ– ज्ञान प्राप्ति के पूर्व ब्रह्मचारी बनना आवश्यक है। ब्रह्मचर्य में श्रम और तप करने से उच्चता प्राप्त होती है। इस प्रकार के ब्रह्मचारी से ही परमात्मा का श्रेष्ठ ज्ञान प्रसिद्ध होता है, तथा देव अमरपन के साथ संयुक्त होते हैं। ❁❁❁

प्रेरणा–प्रद दोहे

सत्यशील जौ लौ जिये, तौ लों तजें न टेक।
झूँठे करत अनेक प्रण, पै न निबाहत एक।। 1।।

सूखी रीझ कठोर की, गहे न गुण की बाँह।
सूखे तरु देते नहीं, पत्र फूल फल छाँह।। 2।।

ब्याज बढ़ाता है जिन्हें, उद्यम करें न और।
उनकी माया में कहाँ, परहित पावे ठौर।। 3।।

जो कुछ और भला, करते हैं हम लोग।
उसमें होता है भरा, अपना ही सुख भोग।। 4।।

बातों के बरछे लिये, आपस के मतभेद।
क्या बरसावेंगे सुधा, बादल में कर छेद।। 5।।

ठीक बात माने नहीं, मन में भर ली भूल।
सींच रहा मूढ़ धी, चन्दन जान बबूल।। 6।।

www.thearyasamaj.org

ऋषि दयानन्द सरस्वती

का जीवन चरित्र

रचयिताः परम ऋषिभक्त पुरुषोत्तमदास, मथुरा

ईश–विनय

हे विश्वदेव सबके स्वामी! दुर्गुण दुर्व्यसन दूर कीजे।
सारे दुःख संकट कट जायें, कल्याण–मार्ग भगवन् दीजे॥
मैं आया शरण तुम्हारी प्रभु, दो बलबुद्धि का दान मुझे।
निशिदिन भक्ति में रहूँ तेरी, दो ऐसा पावन ज्ञान मुझे॥
इसलिये नाथ ! अब कृपा करो, हमें सफल कामनायें मेरी।
हों कठिन समस्यायें भी हल, जब देव कृपा होवे तेरी॥
कुछ कथन करने को मेरा मन, हे नाथ आपकी मदद चहूँ।
उस जगदोद्धारक देव दयानन्द जी का जीवन चरित कहूँ॥

भारत–भाग्याकाश में छाई घटा अपार।
सत्य–सूर्य था छिप गया छाया अन्धाचार।

भू–मण्डल में चहुँ तरफा से काले बादल मंडराय रहे।
दुर्बुद्धि, स्वार्थी ढोंगी थे भारत में धूम मचाय रहे॥
सब ओर कुरीति–कुचक्र चला अँधियारी बढ़ती जाती थी।
ईसाई–मुस्लिम पनप रहे, आर्य जाति घटती जाती थी॥
वेदों का पढ़ना छोड़ दिया मनमाने पन्थ किये जारी।
भोली जनता को लूट रहे, पण्डे महन्त और मठधारी॥
कर्तव्य–विमुख नर–नारी सब आलस्य–निशा सन्नाय रही।
हाँ कहीं–कहीं विद्युत् रेखा की कुछ–2 झलक दिखाय रही॥

तमसावृत इन क्षणों में रवि का हुआ प्रकाश।
दयानन्द के रूप में करन निराशा–नाश॥
रम्य भूमि सौराष्ट्र में एक मौरवी राज।
ईश कृपा से सर्वविधि था वहाँ सुख का साज॥

www.thearyasamaj.org

था इसी राज्य में नगर एक जिसे टंकारा सब कहते थे।
औदीच्य वंश में पैदा हो श्री कर्षन जी वहाँ रहते थे॥
सत्‌वादी थे, गुण-ग्राही थे कुछ घर के भूमाहारी थे।
कुछ राज्य के कार्यों में प्रबन्ध करने के यही अधिकारी थे॥
इसलिये सिपाही सैनिक भी इनके यहाँ पर कुछ रहते थे।
सामान चतुर्दिक् सुख के थे आनन्द नित्य प्रति लहते थे॥

सम्वत् अठारह सौ इक्यासी पौष मास बुधवार।
पुत्र जन्म इनके हुआ छाईं खुशी अपार॥

वाद्यों की मधुर अवाज हुई चहुँ ओर वेद ध्वनि छाइ रहीं।
नारियाँ आय गृह प्रति-गृह से सब पुत्र बधाई गाइ रहीं॥
श्री कर्षन जी परिवार सहित जन्मोत्सव खूब मनाय रहे।
जी खोल दान दे विप्रों को धन्यता स्वयं ही पाय रहे॥
कुल-मर्यादा की पद्धति में सुत नाम करण इनने कीना।
इस सुअन लाड़ले प्यारे का रख नाम 'मूलशंकर' दीना॥
प्रिय-शिशु की कलित-ललित क्रीड़ा थी मातृ-हृदय को सुखदाई।
दिन प्रतिदिन बालक बढ़ता था ज्यों शुक्ल चन्द्रमा की नाईं॥
जब पाँच वर्ष की आयु हुई तो मात-पिता हर्षाने लगे।
स्तोत्र, मन्त्र, श्लोक आदि कण्ठस्थ इन्हें करवाने लगे॥

आठ वर्ष की आयु में विधिवत् यज्ञ रचाय।
दिया जनेऊ पुत्र को मन में अति हर्षाय॥

यज्ञोपवीत की रीति नीति सन्ध्या उपासना सिखलाई।
गायत्री-जप के अनुष्ठान की सांग रीति भी बतलाई॥
थी बुद्धि-तीव्र अतिशय इनकी, आश्चर्य सभी को होता था।
कण्ठस्थ किये थे वेद चार जब वर्ष चौदहवाँ चलता था॥
थे पिता 'मूल' के शिव-पूजक संग में इनको ले जाते थे।
शिवजी की महिमा गुण-गरिमा बहुभाँति इन्हें समझाते थे।
मन्दिर में नित लेजा-लेजा पक्का शिव-पूजक बना दिया।
शिव की गौरव गाथायें कह श्रद्धा का अंकुर जमा दिया॥

होते-होते मित्रवर व्रत-दिन पहुँचा आय।
कर्षन जी लखि पुत्र को रहे हिये उमगाय॥

www.thearyasamaj.org

शिव चतुर्दशी व्रत रखने की फिर बात पिता ने दुहराई।
और रात्रि–जागरण की महिमा बहुभाँति पुत्र को समझाई।
शिवजी अति औढार दानी हैं, फिर रुद्र रूप भी बतलाया।
वरदान–शाप आश्चर्य भरी गाथाओं में मन विरमाया।
व्रत महिमा से प्रेरित होकर, व्रत रखने का निश्चय कीना।
अनुसुना मातृ अनुरोध किया अनुसरण पिताजी का कीना।
शिव मन्दिर में चहुँ तरफा से भक्तों की टोलियाँ आने लगीं।
हर–हर बम–बम महादेव यों कहकर ऊंचे नाद सुनाने लगीं।

प्रथम प्रहर पूजा समय भक्त रहे हर्षाय।
धूप दीप नैवेद्य बहु रुचि से रहे चढ़ाय।।

दूसरे प्रहर की पूजा में, कुछ भक्तों ने तो शयन किया।
कुछ ने तन्द्रा में डूबे ही पूजा–विधि को सम्पन्न किया।।
तीसरे प्रहर की पूजा की वह घड़ी परीक्षा–कारी थी।
सब भक्त–गणों की आँखों में जब घनीभूत अँधियारी थी।।
निद्रा देवी की गोदी में जब भक्तों ने विश्राम लिया।
मन्दिर को छोड़ पुजारी ने बाहर आकर आराम किया।।
था एक भक्त अविचल अब भी जो कर्षन–लाल कहाता था।
शिवपिण्डी में दत्तचित्त होकर शिव–सुमिरन करता जाता था।

सोते थे सब भक्त गण, सोता था संसार।
जाग्रत केवल 'मूल' था खोल हृदय के द्वार।।

निद्रा–देवी जब–जब इस पर भी, अपना वार चलाती है।
यह जल–तलवार मार देता वह खाकर झट भग जाती है।।
बस इसी बीच में क्या देखा? शिव पिंडी पर चूहे आने लगे।
पूजा की जो सामग्री थी उसे उछल–उछल कर खाने लगे।।
मन माँहि 'मूल शंकर' ने तभी यह मंगल–मूल विचार किया।
यह 'शिव' कैसा जिस पर चढ़कर के चूहों ने आहार किया।।
निर्जीव मूर्ति पाषाण की यह प्रत्यक्ष में ही दिखलाती है।
हा हन्त! ईश के धोखे में शिव–पिण्डी पूजा जाती है।।

आते ही ये भाव उर दूर हुआ व्यामोह।
दीप–शिखा की रेख में मिटा तमस् का छोह।।

www.thearyasamaj.org

जिस तरह मेघ-मालाओं में रह-रह विद्युत् रेखा जगतीं।
ज्यों वायु-वेग से सागर में उत्ताल तरंगे हैं उठतीं॥
त्यों बाल 'मूल' का मन-सागर इस घटना ने मथ डाला है।
अन्धी श्रद्धा का ज्वार हटा शुभ निश्चय-रत्न निकाला है॥
यह मेरा लक्ष्य-ललाम कहाँ? मैं सच्चे शिव को ध्याऊँगा।
होगी यदि सच्ची निष्ठा तो प्रियतम के दर्शन पाऊँगा॥
थी आयु वर्ष चौदह की जब इनने यह दिव्य विचार किया।
झूठे शिव को दिया त्याग और सच्चे शिव का आधार लिया॥

निश्चय कर यह मूल ने पितु को दिया जगाय।
हो विनीत मृदु-भाव से बोले शीश नवाय॥

हे पिता! आपने जिस शिव की महिमा का वृत्त बखाना है।
उसमें इसमें बहु अन्तर है यह अभी मैंने पहिचाना है॥
फिर घटना का उल्लेख किया कर, समाधान की जिज्ञासा।
ज्यों-ज्यों कर समझाना चाहा पर तृप्त न हो पाया प्यासा॥
बोले वह, पिता! आपने तो शिव को त्रिशूलधारी माना।
वरदान-शाप बहु शक्ति युक्त, प्रलयंकर जग हर्ता जाना॥
इसने तो क्षुद्र जन्तुओं से अपना सिर तक न हिलाया है।
यह कैसा है महादेव? समझ मेरी में कुछ नहीं आया है॥

चुप रह, हर-निन्दा न कर मम बालक नादान।
सच्चे शिव कैलाश पर बोले पिता सुजान॥

यह तो जड़ प्रतिमा है केवल जो इसको मन से ध्याता है।
इसके ही माध्यम से हे सुत! वह सच्चे शिव को पाता है॥
कलि-काल है, यह तू क्या जाने, सच्चे शिव यहाँ नहीं आते।
पाषाण मूर्ति में ही वे प्रभु अपनी प्रतिभा हैं दर्शाते॥
इन इधर-उधर की बातों से कब मन का संशय मिट पाया?
'अब सच्चे शिव को ही खोजूं' दृढ़ता से मन में दुहराया॥
छू पितृ-पाद तब बालक ने घर जाने की आज्ञा पाई।
'जाकर सो रह व्रत भंग न कर' यह बात पिता ने समझाई॥

-(शेष अगले अंक में)

www.thearyasamaj.org

कृत–कृत्य हुए। पूरे आश्रम की गतिविधियों के सूत्रधार माननीय कृष्णवीर जी शर्मा अपने पूरे परिवार के साथ यज्ञ में सम्मिलित हुए। उनके साथ उनके अनन्य मित्र श्री लक्ष्मन जी और अत्यन्त प्रेमपात्र श्री जगवीर बाबा जी तथा सिमरौठी के प्रबुद्ध जन भी श्री शर्मा जी की प्रेरणा से इस यज्ञ में पधारे। श्री कृष्णवीर जी शर्मा के ही अभिन्न मित्र व धार्मिक कार्यों से अनन्य निष्ठा रखने वाले श्री रामकुमार जी शौकीन दिल्ली से पधारे और उन्होंने एक लाख ग्यारह हजार का पावन सहयोग भी दिया। चतुर्वेद पारायण यज्ञ में सभी आर्यजनों का सहयोग भरपूर रहा परन्तु विशिष्ट सहयोगियों में समादरणीय धर्मेन्द्रनाथ जी सक्सेना मेजर और उनकी धर्मपत्नी का सर्वात्मना सहयोग रहा। बाजना निवासी श्री विनोद जी डेरी वाले तो हर समस्या के समाधान की कुंजी हैं। उन्होंने घी, बूरा और घी, शक्कर आदि देकर याज्ञिकों की भरपूर सेवा कर महान पुण्य कमाया। यज्ञ में घी, सामग्री के साथ 20 दिन के याज्ञिकों की भोजन व्यवस्था में भी बहुत सहयोग किया।

श्री कृष्णवीर जी शर्मा और विनोद चौधरी डेरी वालों के जुड़ जाने से वेद मन्दिर के धार्मिक कार्यों में प्रगति के मानों पंख लग गये हों आज वेदमन्दिर भौतिक और आध्यात्मिक रूप से पूरी तरह सम्पन्न होकर समाज की आशाओं का केन्द्र बनता चला जा रहा है। ईश्वर की कृपा रही तो वेदमन्दिर सभी आर्यों की आशा का केन्द्र अवश्य बनेगा ऐसा हमारा विश्वास है। श्री विरजानन्द ट्रस्ट के समस्त पदाधिकारी भी सर्वथा धन्यवाद के पात्र हैं। जो इन कार्यों में सदैव अनुकूल परिस्थितियाँ बनाये रखने में तत्पर रहते हैं। ❉

आर्यसमाज भरुआ सुमेरपुर हमीरपुर (उ0 प्र0) के
40 वें वार्षिकोत्सव विश्व कल्याण महायज्ञ की एक झलक

आर्यसमाज भरुआ सुमेरपुर के 40 वें वार्षिकोत्सव दिनांक 11 से 14 नवम्बर 2016 तक स्थानीय रामलीला मैदान में बड़े हर्षोल्लास के साथ सम्पन्न हुआ। प्रथम दिवस उद्‌घाटन समारोह में नगर पंचायत की अधिशाषी अधिकारी कु0 नीतिसिंह द्वारा ओ३म् ध्वजा रोहण सम्पन्न हुआ तथा कु0 नीतूसिंह जी ने प्रमुख यजमान के स्थान में बैठकर यज्ञ में आहुतियाँ प्रदान कीं। यज्ञ के पश्चात् नगर में भव्य शोभायात्रा निकाली गई जिसमें पाँच सजे हुए घोड़ों पर आर्य वीरांगनायें चल रही थीं। रथों में विद्वान् चल रहे थे मधुर ध्वनि के साथ महर्षि के गुणगान वाले गीत गाए जा रहे थे। सैकड़ों आर्यवीर केसरिया टोपी लगाए ओ3म् ध्वज लेकर चल रहे थे। जो प्रमुख मार्गों से होकर पूरे नगर को आर्यसमाज के वार्षिकोत्सव में आने का निमंत्रण दे रहे थे। सम्पूर्ण कार्यक्रम में जिन आर्यवीरों ने रात दिन परिश्रम करके वार्षिकोत्सव में चार चांद लगा दिए उनके नाम इस प्रकार हैं। श्री उमेश आर्य, अमित आर्य, विकल्प, पंकजसिंह, अमर आर्य, सौरभ आर्य, अन्नूसिंह आर्य, दिव्यांशु आर्य, अंकुश आर्य प्रमुख हैं। संचालन डॉ0 विवेक आर्य, आचार्य दिनेश आर्य एवं रमेशचन्द्र आर्य ने किया। आर्यसमाज के कोषाध्यक्ष श्री प्रेमकुमार जी एवं प्रधान श्री बृजकिशोर जी ने सभी का आभार व्यक्त किया। वार्षिकोत्सव सफलता के साथ सम्पन्न हुआ। जनता ने भारी संख्या में वैदिक साहित्य क्रय किया।

www.thearyasamaj.org

'तपोभूमि' जनवरी 2017 R.N.I. No. 2321/57 रजि. सं. MTR नं. 04/2016-18

सत्य प्रकाशन मथुरा के अनमोल प्रकाशन

शुद्ध रामायण (सजिल्द)	220.00	भ्रांति दर्शन	20.00
शुद्ध रामायण (अजिल्द)	170.00	दयानन्द और विवेकानन्द	15.00
शंकर सर्वस्व	120.00	इतिहास के स्वर्णिम पृष्ठ	12.00
मानस पीयूष (रामचरित मानस)	100.00	बाल मनुस्मृति	12.00
नारी सर्वस्व (प्रेस में)		ओंकार उपासना	12.00
शुद्ध कृष्णायण	50.00	शुद्ध सत्यनारायण कथा	10.00
शुद्ध हनुमच्चरित	60.00	दादी पोती की बातें	10.00
विदुर नीति	40.00	क्या भूत होते हैं	10.00
वैदिक स्वर्ग की झांकियाँ	40.00	आर्यों की दिनचर्या	10.00
चाणक्य नीति	40.00	महाभारत के कृष्ण	8.00
महाभारत के प्रेरक प्रसंग	40.00	ब्रजभूमि और कृष्ण	8.00
वेद प्रभा	30.00	सच्चे गुच्छे	8.00
शान्ति कथा	30.00	मृतक भोज और श्राद्ध तर्पण	8.00
नित्य कर्म विधि	30.00	वृक्षों में जीव है या नहीं	5.00
संगीत रत्नाकर प्रथम भाग	25.00	गायत्री गौरव	5.00
यज्ञमय जीवन	30.00	महर्षि दयानन्द की मान्यतायें	5.00
दो बहिनों की बातें	30.00	सफल व्यक्तित्व	5.00
दो मित्रों की बातें	30.00	सर्वश्रेष्ठ कहानियाँ	5.00
चार मित्रों की बातें	20.00	मुक्ति प्रदाता त्रिवेणी	5.00
भारतीय संस्कृति के तीन प्रतीक	20.00	जीजा साले की बातें	5.00
मील का पत्थर	20.00	भारत और मूर्ति पूजा (प्रेस में)	

आवश्यक सूचना

1. पाठकगण वर्ष 2017 के लिये वार्षिक शुल्क 150/- रूपये अविलम्ब भिजवायें तथा पन्द्रह वर्ष की सदस्यता हेतु 1500/- भिजवायें।
2. पत्रिका भेजने की तारीख प्रतिमाह 7 व 14 है, कृपया ध्यान रखें।

बुक-पोस्ट
छपी पुस्तक/पुस्तिका

सेवा में,

....

....

....

....

.... पिन कोड ....

पत्र व्यवहार का पता :-
व्यवस्थापक - कन्हैयालाल आर्य
सत्य प्रकाशन
डाकघर- गायत्री तपोभूमि, वृन्दावन मार्ग
(आचार्य प्रेमभिक्षु मार्ग), मसानी चौराहे के पास,
मथुरा (उ० प्र०) 281003
फोन (0565) 2406431
मोबाइल- 9759804182

Yogendra # 9927136600

स्वामी, प्रकाशक, सम्पादक आचार्य स्वदेश के लिए रमेश प्रिन्टिंग प्रेस, पंचवटी, मथुरा में छपकर सत्य प्रकाशन मथुरा से प्रकाशित